उत्तर प्रदेश लोक एवं
जनजाति संस्कृति संस्थान
संस्कृति विभाग, उत्तर प्रदेश के अधीन स्वायत्तशासी संस्थान

प्रवेशांक | सितम्बर से नवम्बर 2024

बारहमासा

त्रैमासिक पत्रिका

परंपरा का संवाहक

लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान से जुड़िए...

नीचे दिए लिंक पर क्लिक करें...

हमारे फेसबुक पेज से जुड़ें....
https://www.facebook.com/uplokevamjanjati

हमारे ट्विटर हैंडल से जुड़ें....
https://twitter.com/Folk_Tribal_Art

हमारे यू ट्यूब चैनल को सब्सक्राइब करें...
https://www.youtube.com/channel/UCubkMM3KiuanEf9uZs_qN-g

हमारे व्हाट्सएप परिवार में जुड़ें...
https://chat.whatsapp.com/DMRXWOxzcdw5oqCgtmoAt7

हमारे इन्स्टाग्राम से जुड़ें...
https://instagram.com/folkandtribalartsup

हमें संपर्क करें...
0522-7118921

हमें ईमेल करें....
faslkoup.2018@gmail.com

हमारा पत्र व्यवहार पता है...

'बारहमासा' इकाई
उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान
रूम नंबर-926,927, 9वां तल, जवाहर भवन
अशोक मार्ग, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत
पिन-226001, संपर्क- 0522-7118921

इस अंक में...

विषय	लेखक	पृष्ठ स.
बारहमासा गीत (पद्मावत से)	मलिक मोहम्मद जायसी	4-5
जनजातीय शिल्प चित्र	संपादकीय टीम	06
सदेश मा0. मंत्री, संस्कृति एवं पर्यटन, उ०प्र०	जयवीर सिंह	07
सदेश, प्रमुख सचिव, संस्कृति एवं पर्यटन, उ०प्र०	मुकेश कुमार मेश्राम	08
निदेशक, उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान का आवाहन	अतुल द्विवेदी	09
संपादकीय	राधेश्याम दीक्षित	10
उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान	संपादकीय टीम	11
भारतीय संस्कृति का लोक बिम्ब-कोहबर कला	दुर्जन सिंह राणा	12-14
हमारे लोक वाद्य - मादल	संपादकीय टीम	15
शिखर सम्मान - श्रीमती द्रौपदी मुर्मू, महामहिम राष्ट्रपति, भारत	राधेश्याम दीक्षित	16-17
शिखर सम्मान - साक्षात्कार - पद्मश्री डा० विद्या बिन्दु सिंह	राधेश्याम दीक्षित	18-19
थारू जनजाति का जीवन	प्रभात सिंह	20-21
पर्यटन की नयी ठांव - चंदन चौकी, थारू शिल्पग्राम	संपादकीय टीम	22
थाती-जीवाश्म पार्क, सलखन, सोनभद्र	संपादकीय टीम	23
लोक व्यंजन - महुआ के पकवान	संपादकीय टीम	24-25
लोक चित्रकार - मेरी सृजन यात्रा	दीपा सिंह राघुवंशी	26-27
डिजिटल डिस्ट्रिक्ट रिपॉज़िटरी प्रोजेक्ट	डॉ. मुकेश कुमार	28-29
विशेष-लोकगीत/ विशेष-चित्र पहेली	मंजू नारायण	30
जनजाति हस्तशिल्प - सुपारी के खिलौने	संपादकीय टीम	31
इतिहास के पन्ने - आगरा "भगत" की पुनरूद्धार गाथा	अनिल शुक्ल	32-34
रंग शिल्पी - 'पानी पर रंगोली' की अद्भुत कला	संपादकीय टीम	35
पहल - वर्ष 2022-23 में हुए समझौता ज्ञापन	संपादकीय टीम	36-37
रेडियो जयघोष	संपादकीय टीम	37
वर्ष 2023 - 2024 में सम्पन्न कार्यक्रमों का विवरण	संपादकीय टीम	38-49
संपदा	संपादकीय टीम	50
परिक्रमा - गत माह की उल्लेखनीय गतिविधियाँ	संपादकीय टीम	51
आगामी प्रमुख कार्यक्रम	संपादकीय टीम	52

बारहमासा गीत
(सावन, भादों)

बारहमासा विरह प्रधान लोक संगीत की एक विधा है जिसमें विरहिणी या विरही के माध्यम से उसकी भावनात्मक स्थिति का प्रकटीकरण प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन करते हुए किया जाता है। गीत या पद्य की शैली में वर्ष के बारहों महीनों का वर्णन इसमें किया जाता है। माना जाता है कि सुप्रसिद्ध साहित्यकार 'मलिक मोहम्मद जायसी' कृत 'पद्मावत' हिन्दी की पहली 'बारहमासा' रचना है। इसी बारहमासा से प्रस्तुत है, श्रावण और भाद्रपद मास अवधि में रानी नागमति का विरह वर्णन....

सावन बरिस मेह अति पानी ।	सावन में मेघों से ख़ूब पानी बरसता है ।
सरनि भरइ हौं बिरह झुरानी ।।	भरन पड़ रही है, फिर भी मैं विरह में सूखती हूँ ।
लागु पुनर्बसु पीउ न देखा ।	पुनर्वसु लग गया, क्या प्रियतम ने उसे नहीं देखा ?
भै बाउरि कहँ कंत सरेखा ।।	चतुर प्रियतम कहाँ रहे, यह सोच-सोच मैं बावली हो गई ॥
रकत क आँसु परे भुइँ टूटी ।	रक्त के आँसू पृथ्वी पर बिखर रहे हैं ।
रेंगि चली जनु बीर बहूटी ।।	वे ही मानों बोर-बहूटियाँ रेंग रही हैं ॥
सखिन्ह रचा पिउ संग हिंडोला ।	मेरी सखियों ने अपने प्रियतमों के साथ हिंडोला डाला है ।
हरियर भुइँ कुसुंभि तन चोला ।।	हरी भूमि देखकर उन्होंने अपना तन कुसुम्मी चोले से सजा लिया है ॥
हिय हिंडोल जस डोले मोरा ।	पर मेरा हृदय हिंडोले की तरह ऊपर नीचे हो रहा है ।
बिरह झुलावै देइ झँकोरा ।।	विरह झकोले देकर उसे झुला रहा है ॥
बाट असूझ अथाह गँभीरा ।	बाट असूझ, अथाह और गंभीर है ।
जिउ बाउर भा भवै भँभीरा ।।	मेरा जी बावला हुआ भँभीरी की भाँति घूम रहा है ॥
जग जल बूड़ि जहाँ लगि ताकी ।	जहाँ तक देखती हूँ, संसार जल में डूबा है ।
मोर नाव खेवक बिनु थाकी ।।	मेरी नाव खेवक के बिना ठहरी हुई है ॥
परबत समुँद अगम बिच बन बेहड़ घन ढंख ।	पर्वत, अगम समुद्र, बीहड़ वन और घने ढाक
किमि करि भेटौं कंत तोहि	के जंगल मेरे और प्रियतम के बीच में हैं ।
ना मोहि पाँव न पंख ।।	हे प्यारे, तुमसे कैसे मिलूँ? न मेरे पाँव हैं, न पंख ॥

हिय हिंडोल जस डोले मोरा ।
बिरह झुलावै देइ झँकोरा ॥
बाट असूझ अथाह गँभीरा ।
जिउ बाउर भा भवै भँभीरा ॥

पर मेरा हृदय हिंडोले की तरह ऊपर नीचे हो रहा है ।
विरह झकोले देकर उसे झुला रहा है ॥
बाट असूझ, अथाह और गंभीर है ।
मेरा जी बावला हुआ भँभीरी की भाँति घूम रहा है ॥

जग जल बूड़ि जहाँ लगि ताकी ।
मोर नाव खेवक बिनु थाकी ॥
परबत समुँद अगम बिच बन बेहड़ घन ढंख ।
किमि करि भेटौं कंत तोहि ना मोहि पाँव न पंख ॥

जहाँ तक देखती हूँ, संसार जल में डूबा है ।
मेरी नाव खेवक के बिना ठहरी हुई है ॥
पर्वत, अगम समुद्र, बीहड़ वन और घने ढाक के जंगल मेरे और प्रियतम के बीच में हैं ।
हे प्यारे, तुमसे कैसे मिलूँ? न मेरे पाँव हैं, न पंख ॥

भर भादौं दूभर अति भारी ।
कैसे, भरौं रैनि अँधियारी ॥
मँदिल सून पिय अनतै बसा ।
सेज नाग भै धै धै डसा ॥

भादों का महीना भर गया है, वह अत्यन्त दुःसह और भारी है ।
अँधियारी रात कैसे काटूँ ?
मंदिर सूना करके प्रियतम अन्यत्र बसे हैं ।
सेज नाग होकर दौड़-दौड़ कर डसती है ॥

रहौं अकेलि गहें एक पाटी ।
नैन पसारि मरौं हिय फाटी ॥
चमकि बीज घन गरजि तरासा ।
बिरह काल होइ जीउ गरासा ॥

एक पट्टी पकड़े मैं अकेली पड़ी रहती हूँ ।
नेत्र फैलाए हुए मैं हृदय फटने से मरी जा रही हूँ ॥
बिजली चमक कर और मेघ गरज कर मुझे डरपाते हैं ।
विरह काल होकर प्राण हर लेता है ॥

बरिसै मघा झँकोरि झँकोरी ।
मोर दुइ नैन चुवहिं जसि ओरी ॥
पुरबा लाग पुहुमि जल पूरी ।
आक जवास भई हौं झूरी ॥

मघा नक्षत्र झकझोर कर बरस रहा है ।
मेरे दोनों नेत्र ओली से चू रहे हैं ॥
मघा के बाद पूर्वा फाल्गुनी लग गया और धरती जल से भर गई ।
मैं सूखकर ऐसे हो गई, जैसे वर्षा में आक और जवास बिना पत्ते के हो जाते हैं ॥

धनि सूखी भर भादौं माहाँ ।
अबहूँ आइ न सींचति नाहाँ ॥
जल थल भरे अपूरि सब
आँगन धरति मिलि एक ।
धनि जोबन औगाह महँ दे बूड़त पिय टेक ॥

भरे भादों में भी युवती सूख रही है।
हे स्वामी, अब भी आकर क्यों नहीं सोंचते ?
ऊँचे स्थल भी जल से ऊपर तक भर गए हैं ॥
धरती आकाश मिलकर एक हो गए हैं।
हे प्रिय, यौवन के अगाध जल में डूबती हुई नव-यौवना को सहारा दो ॥

जयवीर सिंह

मंत्री
पर्यटन एवं संस्कृति विभाग
उत्तर प्रदेश

कार्यालय : कक्ष संख्या 73 A-B
विधान भवन, लखनऊ।
: 0522-2239251 (का0)/2237854 (आ)
ई–मेल : tourismminister.up@gmail.com

सन्देश

बहुत ही हर्ष का विषय है कि लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान, उत्तर प्रदेश के विभिन्न अंचलों में कला, संस्कृति जन जाति के प्रचार–प्रसार, संरक्षण, अभिलेखीकरण इत्यादि हेतु त्रैमासिक पत्रिका **'बारहमासा'** का प्रकाशन प्रारम्भ कर रहा है। इस पत्रिका में लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान, उत्तर प्रदेश के प्रयासों के प्रामाणिक संकलन के साथ लोक कलाकारों, चित्रकारों, विशेषज्ञों सहित स्वनामधन्य महानुभावों के ज्ञान, अनुभवों और सहभागी समसामयिक प्रयासों को भी संकलित किया गया है।

उत्तर प्रदेश सरकार और भारत सरकार के साथ असंख्य सामाजिक प्रयासों के संकलन का यह प्रयास निश्चित रूप से प्रशंसनीय और दूरगामी परिणाम देने वाला साबित होगा। इससे जनजातीय संस्कृति के बारे में जागरूकता एवं प्रचार–प्रसार में मदद मिलेगी, जिससे हमारी आने वाली पीढ़ियों को उत्तर प्रदेश एवं पड़ोसी राज्यों के जनजातीय समुदाय जैस थारू, मुंडा, उरॉव, अभुज, मरिया, गोड, धुरवा कोल, कोरवा, संथाल, भील, बैगा, कोस्कू भारिया, हलबा, मरिया, सहरिया इत्यादि जनजातियों के रहन सहन उनकी संस्कृति को जानने और व्यावहारिक रूप से आकर्षक चित्रों यात्रा संस्मरणों को पढ़ने से रूचिकर ढंग से जुड़ने का मौका मिलेगा। यह पत्रिका उत्तर प्रदेश की अप्रतिम सांस्कृतिक साझी विरासत के प्रति पर्यटकों शोधार्थियों प्रदेश के साथ ही देश–विदेश के सैलानियों के लिए निश्चित रूप से संग्रहणीय साबित होगी।

लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान उत्तर प्रदेश का यह कदम सराहनीय एवं उत्साहवर्धक है। हमें उम्मीद है कि इस पत्रिका के द्वारा उत्तर प्रदेश की संस्कृति को विश्व मंच पर स्थापित करने में उल्लेखनीय सफलता मिलेगी।

उक्त स्मारिका के सफल प्रकाशन हेतु हार्दिक शुभकामनाएं एवं बधाई।

(जयवीर सिंह)

श्री अतुल द्विवेदी,
निदेशक,
लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान,
उ0प्र0 लखनऊ।

आवास : 2, एन.एम.आर., विक्रमादित्य मार्ग, लखनऊ।
कैम्प कार्यालय : 1. 'गौरी भवन', कुंजपुरा रोड, सिरसागंज, फिरोज़ाबाद (उ0प्र0)–283151. : 8859951100
2. निकट रेलवे क्रासिंग, करहल रोड, मैनपुरी। : 9760482700

मुकेश कुमार मेश्राम
आई.ए.एस.
प्रमुख सचिव

पर्यटन, संस्कृति एवं धर्मार्थ कार्य विभाग
उत्तर प्रदेश शासन।

लखनऊ :   दिनांक ....

संदेश

लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान उत्तर प्रदेश (संस्कृति विभाग, उ0प्र0) द्वारा कला, संस्कृति के प्रचार-प्रसार, संरक्षण, अभिलेखीकरण हेतु त्रैमासिक पत्रिका 'बारहमासा' का प्रकाशन सराहनीय प्रयास है । यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि इस पत्रिका में लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान, उत्तर प्रदेश के प्रामाणिक संकलन के साथ लोक कलाकारों, चित्रकारों, विशेषज्ञों के ज्ञान, समसामयिक विचारो को संकलित किया गया है।

लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान उत्तर प्रदेश का यह कदम सराहनीय एवं उत्साहवर्धक है। हम यह उम्मीद करते हैं कि इस पत्रिका के द्वारा उत्तर प्रदेश की संस्कृति को विश्व मंच पर स्थापित करने में उल्लेखनीय सहयोग हासिल होगा।

(मुकेश कुमार मेश्राम)

कार्यालय : कक्ष सं. 724–725, फेज–2, 7 वां तल, बापू भवन, उत्तर प्रदेश सचिवालय, लखनऊ – 226 001
दुरभाष नं. (0522) 22371994, 224754 ई–मेल : psecup.culture@nic.in, pscultureup@gmail.com, psec.touirism@gmail.co

अतुल द्विवेदी

निदेशक

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान

उत्तर प्रदेश जनसंख्या की दृष्टि से देश के सभी राज्यों में सबसे बड़ा प्रदेश है। लोक कलाओं की दृष्टि से भी सबसे समृद्ध है। जनजातीय समुदाय अपने अन्दर का जीवंत इतिहास संजोए हुए है। वर्तमान में जनजातीय समुदायों के वंशजों के जीवन में बहुत कुछ परिवर्तन देखने को मिलता है।

बारहमासा का यह प्रवेशांक आपके हाथों में सौंपते हुए हर्ष हो रहा है। उ. प्र. लोक जनजाति एवं संस्कृति संस्थान का यह प्रयास त्रैमासिक रूप से अब नियमित रूप से आपके हाथों में होगा। संस्थान की यह कोशिश होगी कि लोक एवं जनजातिय कला के समस्त अंग लोक नृत्य, लोक संगीत, लोकवाद्य, लोक चित्रकला, लोक नाट्य, लोकगाथायें, लोक साहित्य, लोक परम्परा, लोक ज्ञान के विविध आयामों पर हम कला साधकों के माध्यम से आपके पास पहुँचते रहें। हमारी जनजाति परम्परा अर्वाचीन ही नहीं आधुनिक भी है, उस अनदेखी, अल्प प्रचलित परम्परा को भी हमें शोध, अभिलेखीकरण, साक्षात्कार, साहित्य, संगोष्ठी के माध्यम से जोड़ने का प्रयास करना है।

उ. प्र. लोक जनजाति एवं संस्कृति संस्थान, उत्तर प्रदेश लोक कलाओं के संरक्षण और संवर्धन के साथ ही शैक्षणिक, सामुदायिक, अन्यानेक संगठनों के साझा प्रयासों को एक सूत्र में पिरोने का काम कर रहा है। कलाकारों के उत्थान हेतु हमारा प्रयास है कि हर प्रकार के आयोजनों में लोक कलाकारों को स्थान मिले, अवसर उपलब्ध हों। विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं अन्य संस्थानों के साथ समझौता ज्ञापन के माध्यम से हम इस लक्ष्य को प्राप्त कर रहे हैं। हर संभावनाओं की तलाश करके हर संभव योगदान सुनिश्चित करने के लिए लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान सदैव कटिबद्ध है।

संस्थान अपने विचारों, प्रयासों और गतिविधियों को जन-जन तक पहुंचाने, जन-जन को जोड़ने के लिए ही बारहमासा त्रैमासिक पत्रिका को प्रकाशित किया जा रहा है। हमारा प्रयास है कि जो भी कलाकार अपनी कला की उन्नत करने, परिमार्जित करने, प्रदर्शित करना चाहते हैं उनको अवसर अवश्य मिले, यही हमारा लक्ष्य भी है।

(अतुल द्विवेदी)

संपादकीय

राधेश्याम दीक्षित

लोक जीवन की उत्सवधर्मिता का मंच है 'बारहमासा'

उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान की त्रैमासिक पत्रिका 'बारहमासा' की यह पहल एतिहासिक लक्ष्यों और विचारों के साथ हुई है। प्रवेषांक आपके हाथों में है। संस्थान के उद्देश्यों की पूर्ती के लिए वर्षों से ऐसे प्रकाशन की आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा था। संवैधानिक अधिकारों के संपूर्ण उपभोग से वंचित जनजातीय समुदाय आधुनिक विकास के लाभ से अभी भी काफी दूर है।

उल्लेखनीय है कि जनजातीय समुदाय में प्रकृति के वास्तविक पोषक होने की भावना लोकजीवन के हर उपक्रम में स्पष्ट देखने को मिलती है। संस्थान के इस प्रकाशन के माध्यम से हमारा अहम प्रयास है कि लोक कलाओं की विभिन्न विधाओं पर हो रहे कार्यों, प्रयासों और रचनात्मक गतिविधियों से प्रदेश, देश और दुनिया को नियमित रूप से परिचित करवाया जाए। इस कार्य में जनजातीय पक्षों को प्रचुर स्थान और अवसर मिले। शिक्षा, साहित्य, कला और विभिन्न माध्यमों में लोक जीवन की उत्सवधर्मिता भी परिलक्षित हो।

'बारहमासा' महज एक पत्रिका भर नहीं है। यह एक रचनात्मक मंच है। इसके माध्यम से संस्थान, सरकार, गैर सरकारी संगठनों के साथ ही प्रत्येक स्तर पर उल्लेखनीय भूमिका निभा रहे साथियों की अभिव्यक्ति साझा होगी। किसी भी कालखंड के लिए यह प्रकाशन एक संग्रहणीय और प्रमाणभूत दस्तावेज भी साबित होगा, जो यात्रा की कड़ियों के माध्यम से हर उपलब्धि का व्यावहारिक अनुभव करवा सके। आप सभी के सुझाव, विचार और प्रतिक्रियाएं सादर आमंत्रित हैं। ■

(राधेश्याम दीक्षित)
dixitradhey@gmail.com
9792738663

आभार :
संस्कृति विभाग, उत्तर प्रदेश
पर्यटन विभाग, उत्तर प्रदेश

संरक्षक :
जयवीर सिंह, मन्त्री, पर्यटन एवं संस्कृति, उत्तर प्रदेश

सह संरक्षक :
मुकेश कुमार मेश्राम, प्रमुख सचिव, संस्कृति एवं पर्यटन, उ0प्र0

संपादक :
अतुल द्विवेदी, निदेशक
उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान

डिजाइन सहयोग एवं फोटोग्राफी : संतोष मिश्र

डिजाइन : अभिषेक सिंह

इलस्ट्रेशन : राजन मिश्र

सहयोग :
अवधेश अवस्थी
राजेश शर्मा
अमित कुमार श्रीवास्तव
शुभम श्रीवास्तव
रवि राज

मुद्रक : आदित्य इंटरप्राइजेज, लखनऊ

प्रकाशक : उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ

नोट:-

- इस पत्रिका में प्रकाशित सभी लेखों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी होंगे।
- प्रकाशक और मुद्रक के साथ ही संपादक मात्र रचनात्मक प्रस्तुति और जनजागरूकता के उद्देश्य की पूर्ती हेतु सामग्री संकलन के लिए जवाबदेह हैं।
- पत्रिका में विभिन्न कलाकारों और विषयवस्तु विशेषज्ञों के द्वारा लिखित सामग्री और तस्वीरें भेजी गई हैं, किसी विशेष तस्वीर अथवा लिखित, प्रकाशित सामग्री का एक जैसा होना संभव और स्वाभाविक है।
- यदि किसी के द्वारा कॉपीराइट का दावा किया जाता है, तो उसे ससम्मान उचित श्रेय आगामी अंक में अवश्य प्रकाशित करके दिया जाएगा।
- अपरिहार्य परिस्थितियों में यदि कोई प्रकरण विधिक क्षेत्र में आता है, तो वाद का क्षेत्र लखनऊ न्यायलय ही मान्य होगा।

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान

संस्कृति विभाग, उत्तर प्रदेश के अधीन स्वायत्तशासी संस्थान

उत्तर प्रदेश के जनजातीय एवं लोक संस्कृति के संरक्षण, संवर्धन एवं प्रदर्शन हेतु उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान की स्थापना सन् 1986 में की गई थी। लोक कला जन मानस की विचारधारा, आत्म चिंतन एवं जीवन शैली की स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। लोक कलाएं क्षेत्रीय सर्जना का अप्रतिम उदाहरण प्रस्तुत करते हुये मानवीय मूल्यों के साथ अनुभूति, कल्पना एवं जन विश्वास का सम्मिश्रण हैं। सहजता, सादापन, सरलता एवं आत्मसंतोष इनकी मूल विशेषता है। लोक कला के विभिन्न स्वरूप हैं, जो ग्रामों एवं नगरों में विद्यमान है, इनकी पृष्ठभूमि में लोक गाथा, लोक धर्म एवं लोक परम्परा आदि की महत्वपूर्ण भूमिका है, जो मूलतः प्रकृति पर निर्भर है, न कि बाजारवाद पर।

पारिभाषिक रूप से 'लोक' का अर्थ ऐसी जनता से है जो अभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता, पांडित्य चेतना अथवा अंहकार से शून्य है तथा परंपरा के प्रवाह में जीवित है। भारतीय परम्परा 'लोक' पूर्वजों एवं प्रकृति से जुड़ी हुई है जो अतीत एवं वर्तमान से जुड़कर भविष्य के लिए तत्पर रहता है। "प्रत्यक्षदर्शी लोकानां सर्वदर्शी भवेन्नः" वस्तुतः लोक में अनुष्ठानिक कार्यों की प्रधानता होती है, जिसमें चिंतन के व्यापक अर्थ निहित होते हैं तथा लोकहित का भाव एवं उसके स्वरूप का निर्धारण करते हैं। लोक कला में उक्त चिंतन, भाव एवं अनुष्ठानों से जुड़े प्रदर्शन एवं प्रसंग को नियोजित रूप से संरक्षित एवं संवर्धित किया जाना एवं लोक संस्कृति की लुप्त होती विधाओं को मंच प्रदान करना, इनसे संबंधित सर्वेक्षण/दस्तावेजीकरण आदि का महत्वपूर्ण कार्य किया जाना संस्थान का मुख्य उद्देश्य है। इस वर्ष संस्थान द्वारा लुप्तप्राय कला रूपों, लोक रूपों तथा लोक संस्कृति के विविध पक्षों का सर्वेक्षण एवं दस्तावेजीकरण प्राथमिकताओं पर रहा है।

संस्था के उद्देश्य

1. उ0प्र0 की लोक और जनजाति कलाओं एवं हस्त शिल्प एवं संस्कृति का संयोजन एवं विकास।
2. लोक कलाओं, संस्कृति एवं शिल्प के क्षेत्र में शोध का विकास एवं उन्हें बढ़ावा देना, पुस्तकालय, अभिलेखागार, संग्रहालय, पुस्तकों, टेपरिकार्ड्स आदि स्थापित करना।
3. लोक कलाओं, संस्कृति एवं शिल्प विकास हेतु भारत की अन्य संस्थाओं एवं विदेश से सहयोग का प्रयास।
4. विभिन्न क्षेत्रों की लोक एवं जनजाति कला, संस्कृति, शिल्प की तकनीक एवं आदर्शों का आदान-प्रदान।
5. ऐसी संस्थाओं की स्थापना को बढ़ावा देना जो कि लोक एवं जनजाति कला, शिल्प एवं संस्कृति के संरक्षण तथा विकास हेतु प्रशिक्षण दें।
6. लोक एवं जनजाति कला, शिल्प एवं संस्कृति के क्षेत्र में सर्वेक्षण, अभिलेखीकरण एवं प्रचार को बढ़ावा देना।
7. लोक एवं जनजाति कला, शिल्प एवं संस्कृति के क्षेत्र में सेमिनार, कार्यशाला, शोध एवं सर्वेक्षण हेतु अनुदान देना।
8. जनजाति एवं लोक कला का कार्य, संगीत, नृत्य एवं नाटक, त्योहारों तथा शिल्प में राज्य तथा राज्य के बाहर प्रायोजित करना।
9. भारतवर्ष एवं विदेश की ऐसी समान संस्थाओं के साथ सहयोग करना जो लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति के संरक्षण, संवर्धन एवं प्रोन्नति की अभिवृद्धि कर रही हों।
10. विभिन्न क्षेत्रों की लोक एवं जनजाति कला, शिल्प एवं संस्कृति की तकनीकियों का संवर्धन एवं पारस्परिक आदान-प्रदान को प्रोत्साहित करना।
11. लोक जनजाति कला एवं हस्तशिल्प के संरक्षण, संवर्धन एवं विकास के लिए ऐसी विभिन्न संस्थाओं को प्रोत्साहित करना जो इस क्षेत्र में प्रशिक्षण दे रही हों।
12. ऐसे साहित्य सामग्री का अनुवाद, संग्रहण एवं प्रकाशित करना जो लोक जनजाति कला, हस्तशिल्प एवं संस्कृति से संबंधित हो।
13. प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में लोक, जनजाति कला, हस्तशिल्प एवं संस्कृति को पुनर्जीवित कर संरक्षित करना और उनके विकास को प्रोत्साहित करना।
14. लोक जनजाति कला एवं हस्तशिल्प की ऐसी गतिविधियों को प्रोत्साहित करना जिनसे व्यावसायिक गतिविधियों की अभिवृद्धि हो सके।
15. लोक एवं जनजाति कला एवं हस्तशिल्प के क्षेत्र में अपने कार्य की साधना में लगे हुए ऐसे कलाकारों एवं उनकी उत्कृष्ट उपलब्धियों के लिए उन्हें मान्यता प्रदान करना तथा उन्हें सम्मान इत्यादि प्रदान करना।
16. ऐसी संस्थाओं को सम्बद्धता प्रदान करना जो लोक एवं जनजाति कला एवं हस्तशिल्प के संरक्षण, संवर्धन एवं विकास कार्य में कार्यरत हो। प्रदेश एवं प्रदेश के बाहर विभिन्न क्षेत्रों के मध्य सांस्कृतिक संबंधों को सुदृढ़ एवं संपुष्ट करना। ■

भारतीय संस्कृति का लोक बिम्ब

'कोहबर कला'

डॉ० दुर्जन सिंह राणा
स्वतंत्र चित्रकार

लोक कला संस्कृति और सभ्यता की जीती-जागती धरोहर होती है। हमारे देश में लोक-कला प्रचुर मात्रा में पाई जाती है, जबकि पश्चिम के अनेक विकसित देशों में लोक-कला लगभग समाप्त हो चुकी है और उसके स्थान पर आधुनिक कला का बोलबाला हो गया। लोक-कला का आधार देश की संस्कृति, सभ्यता, परम्परा, जीवन और लोकमानस ही होता है। आश्चर्य तो तब होता है जब गँवई-गाँव के रहने वाले लोग, जिन्हें असभ्य माना जाता है, जब ये कलाकृतियाँ बनाते हैं, तब संसार भर में प्रसिद्ध होते हैं।

देश के प्रत्येक क्षेत्र में लोक-कलाएँ विद्यमान हैं, जो भारतीय संस्कृति को बल प्रदान कर रही हैं। ऋग्वेद में लोक शब्द का प्रथम अर्थ 'स्थान' मिलता है। बाद में तीन लोक, चौदह लोक आदि अर्थ मिलते हैं। गीता में 'अतोस्मि लौक वेदे च प्राथितः पुरुषोत्तमः' भी वेद से इतर लोक नियम की अथवा लोक-शास्त्र की सत्ता स्वीकार की गई है। प्राकृत एवं अपभ्रंश के लोक अपवाद (लोक-प्रथा) तथा लोक जन्म (लोक-यात्ता) शब्द भी उसी अर्थ की ओर संकेत करते हैं हिन्दी में सूर तुलसी और मीरा आदि ने लोक शब्द का प्रयोग जन समाज जन-समाज, मानव मात्र के लिए किया जाता है।

लोक के समानार्थी अंग्रेजी शब्द 'फोक' की उत्पत्ति एंग्लो सैक्सन शब्द FORE' से हुई है। जर्मनी में यह 'VOLK' के रूप में प्रचलित है। फोक शब्द से संकुचित और व्यापक दोनों अर्थ उपलब्ध होते हैं। संकुचित अर्थ में 'FOLK' फोक शब्द से असंस्कृत और मूढ़ समाज का बोध होता है तथा व्यापक अर्थ में इसका प्रयोग सुसंस्कृत राष्ट्र के सभी लोगों के लिए होता है। इस फोक शब्द के लिए हिन्दी में लोक, जन और ग्राम तीन शब्दों का प्रयोग हुआ है। परन्तु लोक शब्द को ही उपर्युक्त स्थान प्राप्त है। 'लोक' मनुष्य समाज का वह वर्ग है, जो अभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता और पाण्डित्य की चेतना के अहंकार से शून्य है और जो एक परम्परा के प्रवाह में जीवित है। डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी लोक शब्द का अर्थ बताते हुए कहा है कि लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं है, बल्कि गाँव और नगरों में फैली हुई व समूची जनता है, जिसके व्यावहारिक ज्ञान आधार पोथियाँ नहीं है।

ये लोक नगर में परिष्कृत रुचि सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वालों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रुचि वाले लोगों की समूची विलासिता और सुसंस्कृता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएँ आवश्यक होती हैं उन्हें उत्पन्न करते हैं। लोक कला किसी विशेष व्यक्ति की कृति नहीं होती। यह तो लोक की सामूहिक अभिव्यक्ति होती है, जो लोक को एक सूत्र में बाँधती है। कहने का अभिप्राय यह कदापि नहीं है कि इसकी रचना व्यक्ति द्वारा नहीं होती, परन्तु वह अपनी कृति को लोक के हाथों में सौंप कर स्वयं अपने को हटा लेता है। लोक-कला के प्रांगण में एक व्यक्ति की कला लोक की कला बन जाती है। किसी भी लोक-कला के विषय में यही नहीं कहा जा सकता कि यह रचना अमुक व्यक्ति के द्वारा हुई है।

किसी नाम विशेष से सम्बन्ध न रखने की प्रवृत्ति ने लोक-कला को अमर तत्त्व प्रदान किया है। ऐसी ही एक अन्य प्रसिद्ध कला का नाम है- कोहबर कला। कोहबर बिहार, झारखण्ड और उत्तर प्रदेश में भित्ति चित्र परम्परा का प्राचीन उदाहरण है, जो वैवाहिक उत्सव में बनाई जाने वाली लोक कला एवं सांस्कृतिक परम्परा का उदाहरण है। कोहबर कला में पर्याप्त विविधता होती है। विशेष भू-भागों का विशेष परिवेश, स्थानीय

रूचियाँ, पहनावा, धर्म, लोक-कथाएं, लोक-गीत, देवी-देवता, पौराणिक आख्यान, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, रीति-रिवाज व त्योहार लोक-कलाओं के प्रेरणा स्रोत बने ।

इस में कभी हमारे पौराणिक प्रतीक उभर कर आते हैं तो कभी उसमें धार्मिक आस्था दिखाई देती है कभी उसमें प्राचीन मन्दिरों की छटा तो कभी हमारे आधुनिक जीवन के प्रसंग दिखाई देते हैं। कोहबर में कहीं चित्रों में पानी के कच्चे रंगों का, तो कहीं पक्के रंगों का प्रयोग है। कहीं कपड़े पर तथा कहीं कागज पर इसे बनाया गया है। आधुनिक कला में जो प्रतीकों का शुभ विवाह पर आधारित कोहबर कलाअंकन किया जाता है, यह परम्परा लोक-चित्रों से ही प्रारम्भ होती है यह उसी का परिवर्तित रूप है।

इन कोहबर कलाकृतियों के रंगों, आकारों में विविधता है, परन्तु एकरूपता लिए हुए। यही इनकी स्वाभाविकता का रहस्य है। लोक-कलाकार स्वयं नहीं जानता कि उसने रचना कैसे की ? सच पूछा जाए तो ये कलाकृतियां भावना की हिलोर से प्रकट हुई हैं। उल्लासित तूलिका से एक रेखा बनी, आकार उभरा और लोक के मन की भावना लोक कलाकृति बन गई। विवाह गृहस्थ जीवन प्रारम्भिक बिन्दु है, जो सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक कार्य-कलापों के आधार पर है। अतः विवाह में महत्त्वपूर्ण दो अंग है- वेदाचार और लोकाचार। कोहबर लोकाचार परम्परा के अन्तर्गत आता है, जिसमें औरतों का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है।

प्रचलित लोक-रिवाजों के आधार पर विभिन्न अनुष्ठानों को निभाया जाता है। अतः कोहबर लोकाचार परम्परा की शादी में होने वाले विद्या हैं, जो पारम्परिक और स्थानीय मतानुसार विभिन्न जगहों पर सांस्कृतिक महत्त्व के अनुरूप है।

कोहबर का शाब्दिक अर्थ है- वर वधु का निवास स्थान। कोह, गुफा या कमरा, वर-वधू अर्थात दुल्हन का निवास स्थान से है। इस शब्द को संस्कृत भाषा में कोष्ठवर का अपभ्रंश रूप कोहबर भी माना जाता है। अतः शब्द का शाब्दिक अर्थ कमरा, जहाँ वर-वधू पहली रात व्यतीत करते हैं। कोहबर वास्तविक रूप में भित्ति चित्र और शिला चित्र-परम्परा का रूप है, जो 300-1000 ई०पू० का है। मिर्जापुर में पाषाण युग से और हजारी बाग में यह शैली कांस्ययुगीन भित्ति चित्र में मिली, वही चित्र-श्रृंखला पारम्परिक रूप में गोधन, सोहर और कोहबर के रूप में विद्यमान है।

यह लोक परम्परा पर आधारित वैवाहिक अनुष्ठान है, जो मूलतः क्षेत्रीय विशेषता और रीति-रिवाज है, जो आदिवासी या लोक परम्परा मानी जाती है। पाषाणयुगीन सभ्यता से अब तक चली आ रही परिपाटी है, जो विभिन्न हिन्दू अनुष्ठानों के रूप में विद्यमान है।

यह अनुष्ठानिक शैली हिन्दू विवाह में एक विधि रूप में स्थापित रिवाज हैं। इसकी विशेषता कांस्ययुगीन चित्रों के अनुरूप है, जिसमें ज्यामितीय

आकार, लता, पुष्प, पौधे, बड़े जानवर, पक्षियों, कीड़े-मकोड़े, हल, ओखल-मूसल आदि घरेलू वस्तुओं के कोहबर चित्रण दीवार पर आयताकार या चतुर्भुजीय आकार का होता है। इसमें बनने वाली आकृतियाँ होती हैं। तोता, बाँस, कमल का पत्ता, कछुआ, मछली के अलावा नैना और योगिन के चित्रांकन का प्रचलन है। प्रस्तुत चित्रों में इसका अवलोकन किया जा सकता है। इसमें सामा-चकेवा (मिथिलांचल में प्रचलित लोक कथा) का चित्रण तथा तांत्रिक आकृतियों का भी सामंजस्य होता है। कोहबर में कहीं-कहीं पर मिथुन आकृतियों के साथ प्रतीकात्मक कामरत चित्र भी होते हैं।

यह चित्रण अनुभवी महिला चित्रकार ही करती हैं। जल रंगों से रुई की तूलिका और अनार की कलम से यह चित्र बनाए जाते हैं। कोहबर चित्र में चटख रंगों का प्रयोग किया जाता है। शैव, शाक्त और वैष्णव सम्प्रदायों के चित्रों के अलावा नारी नृत्य, विषहरी और अघोरी, लोरिकायन, बयाल सिंह, कमला, कोयला, नयना बनजारा तथा राजा सल्हेस आदि विषयों पर चित्र बनाए जाते हैं।

पौराणिक विषयों में चीर हरण, राधा-कृष्ण नृत्य, राम-सीता विवाह आदि जर-जटिल, शिशु नृत्य, करिया झूमर तथा बगुला-बगुली आदि भी चित्रित किए जाते हैं। यहाँ प्रचलित राजा सल्हेस की शौर्य गाथा को हाथी पर सवार, अंगरखा पहने, पगड़ी बांधे, पीठ पर तरकश लगाए, हाथ में तलवार लिए हुए चित्रित किया जाता है। यह कृति वीर रस से पूर्ण होती है। यहाँ इनकी मूर्ति भी बनाई जाती है।

भारत में विवाह के तीन आयाम हैं। प्रथम एक स्त्री और पुरुष के बीच स्थायी काम संतुष्टि, द्वितीय सामाजिकता के दायरे में वंश-वृद्धि के लिए और तृतीय विवाह को एक धार्मिक अनुष्ठान मानकर दो व्यक्तियों के बीच आत्मिक-आध्यात्मिक सम्बन्ध स्थापित करना।

कोहबर चित्र शैली विवाह के इन तीनों पक्षों (वैयक्तिकता, सामाजिकता और आध्यात्मिकता) को चित्रित करती है। इस शैली के चित्र उत्तर-प्रदेश और बिहार में विशेष रूप से चित्रित किए जाते हैं। कोहबर एक भित्ति चित्रण है। यह चित्रकला की एक अत्यंत प्राचीन और परंपरागत लोक चित्रण की शैली है। इसका उल्लेख उत्तर भारतीय मिथक-साहित्य में मिलता है। कोहबर चित्र में फूल, पत्तियाँ, फल और पशु-पक्षियों की आकृतियों को चित्रित करना शुभ माना जाता है। चित्र के चारों ओर ज्यामितीय आकृतियों को अलंकृत किया जाता है। कोहबर के चित्रों को बनाने के लिए खनिज रंगों एवं घर में मिलने वाली वस्तुओं का प्रयोग किया जाता है।

रंगों में प्रायः लाल (गेरू), सफेद (चूना, पिसा चावल, खड़ियाँ मिट्टी) पीला (हल्दी या पीली मिट्टी), नीला, काला रंग और गाय के गोबर का प्रयोग किया जाता है। बिहार, उत्तर प्रदेश और झारखण्ड में कोहबर चित्रण परम्परागत रूप से अति प्राचीन है। झारखण्ड में इसे कोहबर चित्र और बिहार में कोहबर लेखन नाम से जाना जाता है। कोहबर चित्रण का कार्य प्रायः महिला चित्रकार करती हैं।

बिहार में परम्परागत कोहबर चित्रण को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। इसका पहला और महत्त्वपूर्ण भाग गोरसाई घर है, जिसमें कुल देवता की मूर्ति स्थापित की जाती है एवं दम्पत्ति अपने कक्ष में प्रवेश करते ही सर्वप्रथम अपने कुल देवता को ही प्रणाम करते हैं। हमारे लोक जीवन में यह धारणा रही है कि किसी काम का शुभारम्भ करने से पहले अपने ईष्ट देवी-देवताओं का स्मरण करना चाहिए तत्पश्चात् कोई काम करना चाहिए।

कोहबर चित्रों में माधुर्य के साथ-साथ उल्लास का एक अक्षय स्रोत भी रहता है। ये चित्र साधारण जन-मानस की सहज अभिव्यक्ति हैं। लोक चित्रकार दर्शक, चित्रकार एवं पुजारी तीनों की भूमिका का निर्वहन करता है। कोहबर दृश्य लौकिक आनन्द में रस का संचार करते पशु-पक्षियों से सुसज्जित कोहबर हैं। कोहबर की कला में एक पूरी सभ्यता और संस्कृति प्रवाहित है।

इनमें वेश-भूषा, आचार-विचार, पर्व-त्यौहार, कला-नृत्य, संगीत, लोक-साहित्य आदि में रेखांकित किया जाता है। सूर्यांकन कर इन चित्रों में वर-वधू की वैवाहिकता को लम्बी आयु देने की कामना की जाती है। कोहबर चित्रण के विषय में कहा जा सकता है कि वह रंग और सरल रेखाओं की भाषा में एक कलाकार के हार्दिक मन की आवाज है। रंग का रिश्ता जहाँ प्रकृति से होता है, वहीं रेखाओं का सम्बन्ध संस्कृति से जोड़ा जाता है। उपरोक्त सन्दर्भ में रंगों एवं रेखाओं के आत्मीय रिश्ते को जोड़ने में कोहबर कला पूर्णरूपेण सफल हुई है। ■

आदिवासी समुदायों में मादल को एक पूजनीय वाद्य के रूप में स्थान प्राप्त है, आदिवासी लोगों की मान्यता है कि इन्द्र भगवान की पूजा इसी मादल वाद्य को बजा के की जाती है। ये वाद्य देखने में मृदंग नुमा गले में टांग कर दोनों हाथों से बजाया जाता है।

मादल वास्तव में मृदंग की ही एक किस्म है। यह वाद्य यंत्र मध्य में थोडा उभार वाला बेलनाकार हाथ वाला ढोल है। मुख्य ढाँचा लकड़ी या चिकनी मिट्टी से बना होता है और सिरों पर चमड़ा होता है, जो कंपन करता है और ध्वनि पैदा करता है। क्षैतिज रूप से मादल ढोल को पकडा जाता है और दोनों सिरों को हाथों से बजाया जाता है। हालांकि मादल, मृदंग से ही विकसित हुआ है, फिर भी दोनों वाद्य यंत्रों के बीच बहुत अंतर है। मादल के बाएं सिरे को 'नठ' कहा जाता है और दाएं सिरे को 'मर्दाना' कहा जाता है। दो प्रकार के मादल का उपयोग किया जाता है - पुरवाली और पश्चिमी। पश्चिमी आकार में छोटा है और इसकी ध्वनि तेज़ होती है। मादल सभी लोक गीतों और नृत्यों की एक महत्वपूर्ण संगत है।

राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू

राधेश्याम दीक्षित

गांव के अकथ संघर्षों से तपकर निकली देश की प्रथम नागरिक की जीवन यात्रा

द्रौपदी मुर्मू देश की पहली आदिवासी राष्ट्रपति बनीं हैं। महामहिम द्रौपदी मुर्मू देश की दूसरी महिला राष्ट्रपति हैं। जीवन के हर क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने वाली महिलाएं शीर्ष संवैधानिक पदों तक पहुंचने में कामयाब रहीं हैं। श्रीमती द्रौपदी मुर्मू का राष्ट्रपति बनना देश की लोकतांत्रिक परंपरा की एक श्रेष्ठ मिसाल है।

दिल्ली से दो हजार किलोमीटर दूर ओडिशा के मयूरभंज जिले में स्थित कुसुमी तहसील के छोटे से गांव उपरबेड़ा के एक बेहद साधारण स्कूल से शिक्षा ग्रहण करने वाली द्रौपदी मुर्मू एक दिन असाधारण उपलब्धि हासिल करके देश के सर्वोच्च संवैधानिक पद पर विराजमान होंगी, ऐसा किसी ने भी कभी सोचा नहीं था। भारतीय लोकतान्त्रिक नीतियों और मूल्यों के चलते आज यह संभव हो चुका है।

> भारत की लोकतान्त्रिक व्यवस्था और सांस्कृतिक अवधारणा सहित एक भारतीय महिला के जीवट की झलक दिखाती है देश की 15हवीं राष्ट्रपति श्रीमती द्रौपदी मुर्मू की जीवन गाथा।

महिलाओं का प्रतिनिधित्व करने के साथ-साथ श्रीमती द्रौपदी मुर्मू देश की कुल आबादी के दस फीसदी से भी कम आबादी वाले आदिवासी समुदाय का प्रतिनिधित्व करती हैं। ओडिशा के बेहद साधारण परिवार से आने वाली द्रौपदी मुर्मू संथाल जनजाति से ताल्लुक रखती हैं। भील और गोंड के बाद संथाल जनजाति की आबादी आदिवासी समुदायों में सबसे ज़्यादा है। जीवट ऐसा कि पति और दो बेटों को असमय खोने के बाद उन्होंने घर में ही स्कूल खोल दिया।

द्रौपदी मुर्मू का जन्म 20 जून 1958 को ओडिशा के मयूरभंज जिले के बैदापोसी गांव में एक संथाल परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम बिरंचि नारायण टुडु है। उनके दादा और उनके पिता दोनों ही उनके गाँव के प्रधान रहे। उन्होंने श्याम चरण मुर्मू से विवाह किया था। अपने पति

और दो बेटों के निधन के बाद द्रौपदी मुर्मू ने अपने घर में ही स्कूल खोल दिया, जहां वह बच्चों को पढ़ाती थीं। उस बोर्डिंग स्कूल में आज भी बच्चे शिक्षा ग्रहण करते हैं। इनकी एकमात्र जीवित संतान उनकी पुत्री इतिश्री मुर्मू विवाहिता हैं और भुवनेश्वर में रहती हैं।

इनका बचपन बेहद अभावों और गरीबी में बीता। लेकिन अपनी स्थिति को उन्होंने अपनी मेहनत के आड़े कभी नहीं आने दिया और भुवनेश्वर के रमादेवी विमेंस कॉलेज से ग्रेजुएशन तक की पढ़ाई पूरी की। द्रौपदी मुर्मू ने अपनी बेटी के लिए एक शिक्षक के रूप में कार्य शुरू किया था। राजनीति में आने से पहले मुर्मू ने एक शिक्षक के तौर पर अपने करियर की शुरुआत की थी।

इन्होंने 1979 से 1983 तक सिंचाई और बिजली विभाग में जूनियर असिस्टेंट के रूप में भी कार्य किया था। इसके बाद 1994 से 1997 तक

उन्होंने ऑनरेरी असिस्टेंट टीचर के रूप में भी कार्य किया था।

ओड़िशा में द्रौपदी बीजेडी और बीजेपी की गठबंधन के सरकार में भी मंत्री रह चुकी हैं और 2002 से 2004 तक इन्होंने ओड़िशा राज्य में कई पद संभाले। द्रौपदी झारखंड की ऐसी पहली राज्यपाल थीं जिन्होंने 2000 में झारखंड के गठन के बाद 5 वर्षों का कार्यकाल पूरा किया। इसके साथ ही इन्होंने 2015 से 2021 तक राज्य के गवर्नर के रूप में अतुलनीय सेवाएं दीं। द्रौपदी मुर्मू ने एक अध्यापिका के रूप में अपना पेशेवर जीवन शुरू किया और उसके बाद धीरे-धीरे सक्रिय राजनीति में कदम रखा। साल 1997 में इन्होंने रायरंगपुर नगर पंचायत के पार्षद चुनाव में जीत दर्ज कर अपने राजनीतिक जीवन की शुरुआत की थी।

इनके राष्ट्रपति बनने पर दुनियाभर के नेताओं ने इसे भारतीय लोकतंत्र की जीत करार दिया। अमेरिका के राष्ट्रपति जो बाइडन ने अपने संदेश में कहा था कि एक आदिवासी महिला का राष्ट्रपति जैसे पद पर पहुंचना

भारतीय लोकतंत्र की मजबूती का प्रमाण है। उन्होंने कहा था कि मुर्मू का निर्वाचन इस बात का प्रमाण है कि जन्म नहीं, व्यक्ति के प्रयास उसकी नियति तय करते हैं। वहीं, ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधानमंत्री बोरिस जॉनसन ने कहा था कि द्रौपदी मुर्मू का राष्ट्र प्रमुख पद पर पहुंचना उनकी ऊंची शख्सियत का ही परिणाम है।

फ्रांस के राष्ट्रपति एमैनुएल मैक्रों ने भी मुर्मू को राष्ट्रपति बनने पर बधाई दी। वहीं श्रीलंका में राष्ट्रपति चुनाव हारने वाले डलास अल्फापेरुमा ने कहा था कि आजादी के बाद जन्म लेने वाली एवं जातीय और सांस्कृतिक रूप से दुनिया के सबसे अनोखे देश की राष्ट्रपति को बधाई। नेपाल के प्रधानमंत्री शेर बहादुर देउबा ने कहा था कि दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र की राष्ट्रपति निर्वाचित होने पर वह द्रौपदी मुर्मू को बधाई देते हैं।

दुनिया ने भारतीय लोकतान्त्रिक मूल्यों और भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की शक्ति को ना केवल स्वीकार किया बल्कि श्रीमती द्रौपदी मुर्मू के संघर्षपूर्ण जीवन और जीवट से प्रेरणा भी ली। महामहिम की भूमिका में भी श्रीमती द्रौपदी मुर्मू ने देश में संवेदना, दया, करूणा और मानवीय मूल्यों को आगे रखते हुए मूलभूत विषयों की ओर देश का ध्यान आकृष्ट करवाया है। ■

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार, शोधार्थी और सामाजिक अध्येता हैं।)

शिखर सम्मान

लोक जीवन और परम्पराओं की पहरुआ पद्म श्री डा० विद्या बिन्दु सिंह

"लोकजीवन की समृद्ध परम्पराओं पर वरिष्ठ पत्रकार, रंगकर्मी, लेखक और सलाहकार सम्पादक राधेश्याम दीक्षित से विशेष वार्ता पर आधारित"

पद्मश्री डॉ विद्या विन्दु सिंह अवधी लोकगीत, लोकजीवन और परम्पराओं से पोषित भारतीय संस्कृति की शोधार्थी और अधिकारपूर्ण अभिव्यक्ति करने वाले बिरले लोगों में सम्मिलित हैं। आपने ना केवल अध्ययन किया बल्कि संपूर्ण जीवन को लोकजीवन को समर्पित कर दिया। आपका प्रयास है कि देश के जन जन लोकाभिव्यक्ति के स्वर से जुड़े और प्रकृति के साथ ताद्दात्मय स्थापित कर सकें। बारहमासा पत्रिका ने ऐसी लोक रचनाकार के चिंतन, अध्ययन, अनुभव और विशाल साहित्य संपदा से बारहमासा गीतों की परम्परा से जुड़े कुछ मनके निकालकर आपके समक्ष प्रस्तुत करने का छोटा सा प्रयास किया है।

प्र:- हमारे भारतीय समाज का जीवन ऋतु चक्र से जुड़ा है, पम्पराएं हैं वो सभी तिथियों से जुड़ी हुई हैं। बारहमासा क्या है, उसकी अवधारणा क्या है ? हमारी परम्परा में उसका क्या स्थान है ?

उ:- भारतीय दृष्टि जीवन को समग्र रूप से देखती है। ऋतुओं के साथ हमारे जीवन की लय जुड़ी हुई है। ऐसा विश्वास किया जाता है। साहित्यकारों और विद्वानों ने भी इसके बारे में खूब लिखा है। बारहमासा और चौमासा दो तरह के गीत मिलते हैं। कुछ छमासा गीत भी मिलते हैं। बारहमासा में बारहों माह की व्यथा कथा, उसके सुख दु:ख, प्रकृति के साथ जो जुड़ाव होता है, सुख में प्रकृति कैसे सुखी दिखती है, दु:ख में दुखी दिखती है।

प्र:- बारहमासा में प्रकृति के साथ कैसा अन्तर्सम्बन्ध देखने को मिलता है। विशेषकर परम्परागत और साहित्यिक बारहमासा के स्वरूप के बारे में विस्तार से बताएं।

उ:- बारहमासा में प्राय: उद्दीपन रूप में प्रकृति का चित्र मिलता है। बात अषाढ़ से प्राय: सभी बारहमासाओं और चौमासा में भी शुरू होती है। बसन्त सबसे ज्यादा महत्व पाता है, ऋतुराज तो कहा ही जाता है परन्तु लोक में पावस ऋतु को अधिक महत्व दिया जाता है। चुंकि खाली समय होता है, कहीं आना जाना भी नहीं हो पाता, फसल से जुड़े कामकाज भी अधिकांशतया निबट चुके होते हैं, सब काम बन्द हो जाते हैं। वास्तव में इस ऋतु को हमारी परम्परा में उत्सव के रूप में अधिक मनाया जाता है। पावस ऋतु को ज्यादा महत्व देते हुए तुलसीदास जी ने भी कहा...

बरषा रितु रघुपति भगति, तुलसी सालि सुदास।
राम नाम बर बरन जुग, सावन भादव मास ॥

तो पावस ऋतु में जो चौमासा होता है, गौतम बुद्ध भी चौमासा बिताया करते थे।

प्र:- लोकजीवन में गीतों, सूक्तियों और दोहों के माध्यम से ही भावाभिव्यक्ति की जाती रही है। आपको बारहमासा में किसी तरह की लोक शिक्षा का वर्णन मिलता है ?

उ:- मैंने बताया कि प्रकृति उद्दीपन रूप में लोक रचनाओं में दिखाई देती है । इसलिए लोक जीवन प्रकृति के व्यवहार के साथ अपना व्यवहार सुनिश्चित करता रहा है। यह मान्यता रही है कि पावस ऋतु में नदी नाले नहीं ढाकने (पार करना) चाहिए। यात्रा नहीं करनी चाहिए, शुभ कार्य इस अवधि में बंद कर दिए जाते थे। तो उस समय यह बारहमासा गीत गाए जाते थे। हर ऋतु के सुख दु:ख के गीत होते थे। बसन्त ऋतु का वर्णन

आया तो फगुआ की धुन में, पावस का वर्णन है तो कजरी और सावन की धुन में, शरद ऋतु का है.. तो उसका गायन अलग धुन में, इस तरह हर एक ऋतु का वर्णन अलग अलग धुन में गाया जाता था। हर धुन में बारहमासा और चौमासा गीत मिलते हैं।

प्र:- प्रकृति और ऋतुओं के स्वरूप ने लोक जीवन को स्वर दिया, क्या संस्कार गीतों के साथ भी ऐसा कोई संबंध आप बारहमासा गीतों में देखती हैं ?

उ:- बारहमासा की शैली में संस्कारों के गीत भी खूब हैं जिनमें बारहों महीने के वर्णन मिलते हैं... जैसे सोहर की धुन में भी... जैसे एक गीत है जिसमें मां कहती हैं कि अपने बच्चे से अषाढ़ के महीने में मत जन्म लेना... सब तरफ पानी बरसेगा... गोतिने नहीं आ पाएंगी... मेढक टर्र टर्र बोलेगा... तब डर के कोई गाना नहीं गाएगा... सावन में झूला कैसे झूल पाउंगी...भादौं में बिजली तड़पेगी, अंधेरी रात रहेगी... क्वार में तुम जन्म लेना... जब भैय्या मोरी धनवा कुटैइहैं... भौजी ढुढिया बनइहैं... भौजी मेरी पियरी रंगईहैं... बीरन लईकै अइहैं... क्वार जब सम्पन्न होगा, धान घर में आ जाएगा... तब तुम जन्म लेना... हर महीने में बताती है कि इस महीने में व्रत है, इस महीने में मत आना... अमुक अमुख समस्याएं हैं।

प्र:- क्या बारहमासा के गीतों में बिरह वेदना के साथ ही भगवान राम के वनवास को भी स्थान मिला है ?

उ:- देखिए मुझे बहुत से बारहमासा और चौमासा गीत मिले, जिनमें राम जी के वनवास को लेकर भी गीत हैं। मैं आपको सुनाती हूं एक बारहमासा गीत, जिसमें कौशल्या का जो दुःख है, उसी को व्यक्त किया गया है। यह बारहमासा बहुत प्रसिद्ध है। यह वो गीत है, जिसमें कैशल्या व्यथित हैं, राम के वनगमन से... देखिए कितना सुंदर वर्णन किया गया है।

चैत अजोध्या जन्मे राम, कौशल्या चंदन लिपवावें धाम।
गज, मोतियन कै चौक पुरावैं, सोने का कलसा धरवावैं॥
बैसाख मास ऋतु दीप समान, तलफैं धरती औ असमान।
जइस जल मैं तड़पै मीन, उहै गति कैकेयी मोर कीना।
जेठ मास लू लागै अंग, बन मा राम लखन सिया संग।
अषाढ मास गरजै घनघोर, बैलें पपिहा, कुहकैं मोर॥
बिलखैं कौशल्या, अवधपुर धाम।

भीजत होइहैं लखन, सिया राम॥ ....
भूमि गोजरिया फिरत भुवंग, राम लखन औ सीता संग।
भादौ मास बूंद बरसत नीर, घरवा छवावै सकल संसार॥
बड़ बड़ बूंद जे बरसे नीर, भींजत होइहैं सिया रघुवीर।
बन मा भटकैं सीता राम, महल अटारी कौने काम॥
कुआर मास सखी धरम के रात, नित उठि धरम करै संसार॥
यही अवसर जो रहते राम, बाभन जमाय कुछ देते दान॥
आइगै सखी कातिक मास, हमका लागै बिरह कै फांस॥
घर घर दियना बारै नारि, हमरी अजुधिया भयी अंधियार॥
अगहन कुंअरी करत सिंगार, कपड़ा सियावैं सोना कय तार॥
पाट पितम्बर पुलक समान, कनक पीस बैजन्ती माल॥
पूस मास सखी परत पसार, रैन भए जस खांड कै धार॥
कुस आसन कैसे सोइहैं राम, बन मा कैसे करिहैं बिश्राम॥
आइगै सखी माघ बसन्त, कैइसे जियब हम बिना भगवन्त॥
राम चरन मन लागा मोर, बइठी भरत जी हिलावैं चौंर॥
आइगै सखी फगुआ उमंग, चोआ, चंदन, छिरकत अंग॥
बईठी भरत जी घौरैं अबीर, केहिपर छिड़कऔं बिना रघुबीर॥
जे यही गावय बारहमासा, सो पावै बैकुंठै वासा॥
गावयं तुलसी अवधपुर धाम, बन से लौटे लक्ष्मन राम॥

तुसलीदास जी और सूरदास जी प्राय: हर एक लोगतीतों के अंत में पाए जाते हैं। विशेषकर राम और कृष्ण से जुड़े गीतों में।

प्र:- बारहमासा में तो संपूर्ण रामायण के प्रसंग से जुड़ी पीड़ा को समाहित किया गया है। क्या जायसी ने भी ऐसे ही परम्परा से प्रभावित होकर सृजनकार्य किया ?

उ:- जी सही है, बारहमासा में पूरी कथा रामायण की मिलती है। बारहमासा की परम्परा बहुत प्राचीन है। साहित्य ने परम्परा से लिया है इसे। जायसी ने भी लिया और बारहमासा की रचना की है।

पुख नखत सिर ऊपर आवा।
हौं बिनु नाह मन्दिर को छावा॥
बरसें मघा झिकोर झकोरी।
मोर दुई नैन चुवैं जस ओरी॥
मास अषाढ़ नखत घन गरजै।
चुवै गगन से पानी॥
रिमझिम रिमझिम बूंदा बरसे।
टपके महल पुरानी॥
झिर झिर बरसै, झांझर चुवै मोर मकनवा ना।

यह बिरह का गीत है कि पति परदेश गया है। विरहणी की व्यथा नाना रूप आकार धरती हुई इन गीतों में व्यक्त हुई है। प्रकृति संयोग के क्षणों में उल्लास देती है, पर विरह में कष्ट देती है।

बारहमासा की लोक परम्परा और उसकी समृद्ध थाती से हमें और हमारे पाठकों, सुधीजनों को परिचित कराने के लिए आपका बहुत आभार है। विद्या बिन्दु जी बारहमासा के समृद्ध संसार से हमें जोड़ने और आधुनिक समय में संवेदनाओं और प्रकृति के साथ साहचर्य भाव से हम सभी को तिरोहित करने के लिए विशेषकर। हमारे पाठक जरूर परम्पराओं के संरक्षण और संवर्धन में अपना हर संभव योगदान दे सकेंगे। ■

थारू जनजाति का जीवन

प्रभात सिंह
फोटोजर्नलिस्ट और वरिष्ठ पत्रकार

प्रभात सिंह की फोटोग्राफी का शगल उन्हें अख़बार की दुनिया में ले गया। फोटोजर्नलिस्ट ही बनना चाहते थे, मगर बन गए अख़बारनवीस। न्यूज़रूम में कई ज़िम्मेदारियां संभाली और अरसे तक 'अमर उजाला' के संपादक रहे। कैमरा मगर हाथ से कभी छूटा नहीं। लखनऊ, दिल्ली से भोपाल तक अपनी तस्वीरों की नुमाइश और फोटोग्राफी की वर्कशॉप करते रहे हैं। थारू जनजाति की ज़िंदगी पर एक मोनोग्राफ, और कुंभ के मेले पर किताब लिखी है, अख़बारनवीसी पर भी दो किताबें हैं। अभी संवाद न्यूज़ एजेंसी के एडिटर हैं। आर्ट, अदब और थिएटर में ख़ास दिलचस्पी है।

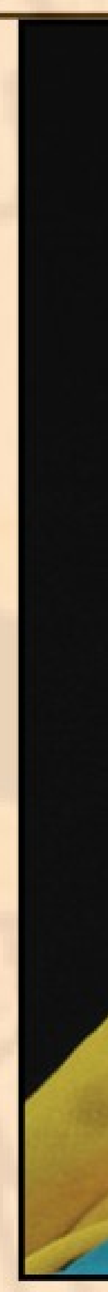

पर्यटन की नयी ठांव
(थारू शिल्प ग्राम)

दुधवा नेशनल पार्क के आसपास रहने वाले थारू जनजाति के समग्र विकास एवं पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए चंदन चौकी में थारू शिल्प ग्राम का निर्माण कराया गया। सरकार का प्रयास थारू शिल्प ग्राम को बड़ा पर्यटन स्थल बनाने का है।

थारू शिल्प ग्राम के संचालन के लिए सरकार राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के तहत गठित स्वयं सहायता समूह की महिलाओं को जिम्मेदारी देने की तैयारी कर रही है। डीएम की अध्यक्षता में संबंधित विभागों के अधिकारियों संग बैठक के बाद थारू शिल्प ग्राम के संचालन के लिए आवश्यक व्यवस्थाएं सुनिश्चित कराने के लिए डीपीआर बनाने के निर्देश दिए गए हैं। इससे आने वाले दिनों में पर्यटन को बढ़ावा मिलने के साथ ही थारू जनजाति के विकास को नया आयाम मिलेगा।

थारू शिल्प ग्राम में सुविधाएं

- थारू हैरिटेज वर्क शेड
- थारू शिल्प विक्रय प्रदर्शन केंद्र
- शिल्प/वस्त्र प्रशिक्षण केंद्र
- थारू रेस्टोरेंट और थारू हट
- थारू नृत्य संगीत केंद्र

बार्डर एरिया डेवलपमेंट योजना के तहत कार्यदायी संस्था लोक निर्माण विभाग के निर्माण खंड तीन ने 174.79 लाख की लागत से इसका निर्माण कराया है। थारू शिल्प ग्राम में थारू हैरिटेज वर्क शेड, थारू शिल्प विक्रय प्रदर्शन केंद्र, शिल्प/वस्त्र प्रशिक्षण केंद्र, थारू रेस्टोरेंट, थारू हट, थारू नृत्य संगीत केंद्र के लिए अलग-अलग कमरे बनाए गए हैं।

थारू पर्यटन केन्द्र के संचालन के लिए लखीमपुर के जिलाधिकारी की अध्यक्षता में आठ सदस्यीय समिति गठित की गई है। आजीविका मिशन के तहत गठित समूहों की महिलाओं को थारू शिल्प ग्राम के संचालन की जिम्मेदारी दी जाएगी। इसके संचालन के लिए संस्था के चयन की प्रक्रिया अभी चल रही है। शिल्प ग्राम में काम करने वाले सभी कर्मचारी थारू जनजाति के ही रहेंगे। समिति की अगली बैठक में शिल्प ग्राम के संचालन की रूपरेखा तैयार कर ली जाएगी। ■

जीवाश्म पार्क

सलखन, सोनभद्र

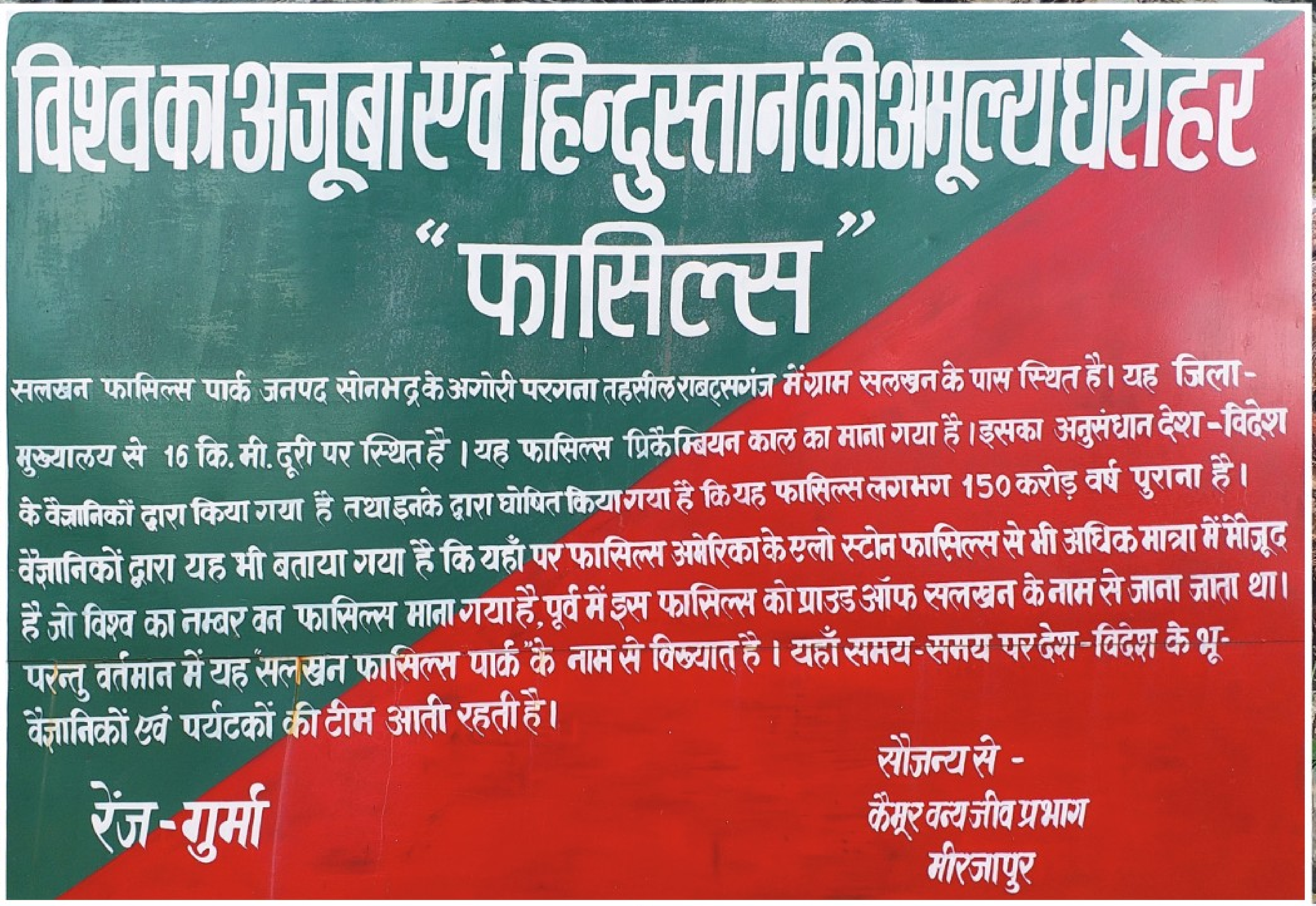

महुआ के पकवान

तकनीकी के दौर में सब लोग अपनी-अपनी कला के साथ सोशल मीडिया के माध्यमों पर अवतरित हो रहे हैं। कोई गाना गा रहा है, तो कोई गीत लिख रहा है, किसी ने कविता वाचन शुरू कर दिया है। कुछ मानिंद लोग सीधे लाईव होकर घरों तक दस्तक दे रहे हैं। घर में नई-नई रेसिपी के साथ तरह-तरह के प्रयोग भी हो रहे हैं। मज़ेदार बात यह है कि प्रयोग किसी भी क्षेत्र में किए जा रहे हों- गाने-बजाने, नाटक, नृत्य, कविता, कहानी, संवाद, सामाजिकता, खान-पान, पकवान, हर प्रयोग के अनुभव, परिणाम आपके सामने होते हैं। इस कडी में हम बता रहे हैं प्रकृति के अनुपम उपहार महुआ के पकवानों के बारे में....

घर का खाना, घर जैसा स्वाद, घर की तरह के सुखद अहसास देने वाले बहुत से स्लोगन होटलों, रेस्तरां, भोजनालयों पर लिखे होते है। जो बार-बार याद दिलाते हैं कि हम जब भी बाहर का ज़ायका लेते है तो उसके अच्छा या स्वादिष्ट होने का पैमाना घर का स्वाद ही होता है। घर का खाना यानी हमारे बचपन के दिनों के तमाम स्वाद जो अम्मा, दादी, नानी के हाथों से होते हुए हम तक आए हैं।

दादी, अम्मा की पीढ़ियों के बीच से स्वाद की बहती हुई यह नदी अपने तटबंधों पर बहुत कुछ छोड़ कर आगे बढ़ जाती है। फास्ट फूड, जंक फूड, ईट-ऑन, रेडी-टू-ईट के पहिये पर चढ़ता स्वाद कहीं भी पहुंच गया हो, पर हर अच्छे स्वाद के बाद हमें यह तो कहना ही पड़ता है,“बिल्कुल घर जैसा बना है”। उसी घरेलू स्वाद की तलाश में आज अम्मा की रसोई से कुछ यादगार ज़ायके साझा कर रहा हूँ।

“रति रस चुए महुआ की डारि” राजेंद्र मिश्र ‘अभिराज’ के एक गीत की यह पंक्ति कानों में युवावस्था से ही रस घोलती रही है। यह मई-जून का महीना है, महुए के बाग़ों से निकलने वाली ख़ुशबू मन में न जाने कहां से भर गई है। छतरपुर से खजुराहो के रास्ते में हूँ। गांव के बीच से निकलते हुए, महुए के पेड़ों से उठती मीठी महक बार-बार महुआ से बनने वाले तमाम पकवानों के मेन्यू की याद दिला रही है। कार की रफ़्तार जितनी तेज़ है, उतनी ही तेज़ है यादों की वापसी गर्मी के दिनों में महुए की शुरुआत के साथ कई तरह की रेसिपी अमल में आने लगती। महुआ के फल आते ही सुबह-सुबह उसके बीनने का काम शुरू हो जाता था। घर के आंगन से लेकर बाग़ तक, दूर-दूर तक महुए की मीठी-मीठी महक भर जाती थी और यहीं से शुरू होता था महुए की बेटी से मोहब्बत का सिलसिला।

किस पेड़ के महुए की कितनी मिठास है, कौन मिठौआ है, कौन तितरह्वा, अम्मा को हर पेड़ की टेक्सोनामी से लेकर फिजियोलॉजी तक पता थी। सबसे पहले मीठे महुआ के रस को अच्छी तरह से निचोड़-निचोड़ कर निकाला जाता था। तब मिक्सर-ग्राइंडर तो होता नहीं था, इसलिए यह काम भी अपने-अपने तरीक़े से किया जाता। आटे को भूनकर चीनी की जगह इस रस का प्रयोग अम्मा लप्सी बनाने के लिए करती थीं। महुआ के रस को आटे में सानकर मीठा पुआ, गुलगुला यानी मीठी पकौड़ी भी इसी

दौर में परोसी जाती। कच्ची घानी के तेल में बने यह पकवान बरसात की रिमझिम को और मादक बना दिया करते थे। घर के बाहर दालानों में बैठे लोगों तक तैर कर यह जायक़ा पहुंच जाया करता था। कितने युग बीत गए, इन निधियों का संचय करते, और आज जब लिख रहा हूं तब भी यह ज़ायक़ा ज्यों का त्यों मन को तरोताज़ा कर रहा है।

आमतौर पर महुए को खूब अच्छी तरह से सुखाकर बड़े-बड़े बर्तनों में बंद कर के रख दिया जाता था। पहली बरसात के बाद इसी महुए को 'फूल' या कांसे के बर्तनों में धीमी आंच पर पकाया जाता था। शाम का नाश्ता पका महुआ और दूध के साथ महुए को मिलाकर रेडीमेड फास्ट फ़ूड की तरह परोसा जाता था। घर के बुज़ुर्ग लोग इसको अधिक सुपाच्य बनाने के लिए दूध की जगह मट्ठा या दही के साथ लेते थे। सिलसिला यहीं ख़त्म नहीं होता था, महुए को सुखाकर मिट्टी के बर्तन में भूनकर उसे अच्छी तरह से भुने हुए तिल के साथ ओखल में अच्छे से कूटा जाता था। इस सोंधेपन के स्वाद का उपयोग कभी-कभार किया जाता था। जिसको लाटा के नाम से मेन्यू में शामिल किया गया है।

अभी महुए की विदाई का वक्त नहीं आया था। महुआ के बीज को कोवा कहा जाता है। उसी कोवे पर हरे रंग का खोल रहता था। कोवे का तेल तो बहुत उपयोगी था ही, कहा जाता था कि नहाने का अच्छा वाला साबुन हमाम और जय बनाने के लिए इसी कोए के तेल का प्रयोग किया जाता था। यह बात भी अम्मा के सूत्रों से ही पता चली है, मैं आज भी इस ख़बर की पुष्टि करने की स्थिति में नहीं हूँ।

बात हो रही थी, कोवे के छिलके की, इस हरे छिलके को निकालकर बेसन में लपेटकर बरसात में पकौड़ी बना कर अम्मा ने कई बार खिलाया है। वह ऐसा व्यंजन था, जिसमें महुआ अपने वास्तविक स्वरूप मीठे से नमकीन बन जाता। यह तो रहे अम्मा की रसोई से निकले महुए के उन तमाम स्वादिष्ट ज़ायके का ब्यौरा, जो अब सिर्फ डॉक्यूमेंटेशन या बच्चों को क़िस्से की तरह सुनाने के काम आ रहा है। हम लोगों के लिए बचपन वाला महुआ तो डीबीटी यानी डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर हुआ करता था। महुए के बाग से सूखे बचे हुए महुए को बीनकर आइसक्रीम से लेकर कोई भी वस्तु एक्सचेंज ऑफर में पाने का सबसे आसान तरीक़ा हुआ करता था।

हमारी मोटर मध्य प्रदेश सरकार के टूरिस्ट विलेज में आकर रूकती है। ड्राइवर कहता है 'सर' हम लोग आ गए। झोपड़ीनुमा इस गेस्ट हाउस में भी महुए के कई पेड़ हैं। पर उनको पकाने, बनाने वाले हाथ अब किसी होटल में नहीं मिलते। क्योंकि सुना है कि महुआ अब लहना हो गया है, जिससे देशी शराब बनती है और एफडीआई के दौर में मदिरा बनाने की यह आत्मनिर्भरता क़ानूनन अपराध है।

किसी भी रेस्तरां में खाने के बाद वेटर अक्सर एक फ़ीडबैक फार्म लेकर खाने के बारे में आपकी राय लेता है। आज जब अम्मा की रसोई से बने तमाम देसी व्यंजनों की याद कर रहा हूं तो लगता है उस फ़ीडबैक फार्म पर अपने दस्तख़त करके इन सभी स्वादों की ताक़ीद कर रहा हूं। ■

अतुल द्विवेदी

मेरी सृजन-यात्रा

दीपा सिंह रघुवंशी

मेरी यह सृजन यात्रा बहुत ही रोचक रही है। मेरी जीवन यात्रा एक कलाकार-रचनाकार प्रशिक्षक के तौर पर तरह-तरह के रोचक अनुभव से भरी रही है। मैं लगातार 10 वर्ष से अपनी कला अध्ययन कला साधना और एक कलाकार-रचनाकार शिक्षक के तौर पर सक्रिय हूं।

मैंने कला का प्रशिक्षण कभी भी कहीं से नहीं लिया। मैंने अपने स्वयं के अनुभव, कला और संस्कृति, संस्कार, धरोहर की खोज एवं कला साधना से प्राप्त किया। अपनी कला साधना को जारी रख लगातार अभ्यास, कला प्रशिक्षण तथा भावी पीढ़ी को अग्रेषित करने के साथ जारी रख कर सीखती और सिखाती रही हूँ। मेरे द्वारा भारतीय संस्कृति पर किए गए कार्यों में जहां एक ओर गहरी रूचि एवं समर्पण परिलक्षित होती है तो वहीं दूसरी ओर कलाओं के संरक्षण के लिए बहुत बड़ा योगदान भी है। कला का प्रदर्शन करना मेरे लिए अत्यंत गौरव का क्षण रहा है। थारू जनजातीय कला एवं अवध की संस्कृति के उन्नयन एवं कलाओं के संरक्षण में योगदान दे रही हूँ। यह प्रतिभा मेरे लिए जनजाति कला एवं अयोध्या के साथ जुड़कर जनजाति क्षेत्र में जनजातीय कला संस्कृति संरक्षण एवं जनजातीय प्रतिभाओं के उन्नयन में सक्रिय रहने का प्रयास है।

> थारू जनजाति की सभ्यता संस्कार संस्कृति लोक कला वह अपने आप में लालित्यपूर्ण विधा रही है। प्राचीन इतिहास से लेकर आधुनिक इतिहास तक विस्तार है। इनकी संस्कृति इनकी सभ्यता पूरे अवध में पूरे विश्व में प्रसारित हो रही है।

मेरा अवधी लोक चित्रकार होने का सबसे बड़ा योगदान अवध की संस्कृति, मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम जी का जन्म स्थान एवं प्राचीन पावन धर्म नगरी है। अवध की संस्कृति, सभ्यता और परंपरा हमारी धरोहर है। इसे कोशल के नाम से जाना जाता था। कोशल की राजधानी अयोध्या थी। अवध का नाम अयोध्या से पड़ा और मेरा परम सौभाग्य है कि मेरी कर्मभूमि अवध की पावन भूमि अयोध्या में ही पालन पोषण तथा शिक्षा क्षेत्र रहा है। अयोध्या की कला और संस्कृति विख्यात है। ऐसी पावन नगरी की कला प्रांजल, सुंदर व मनोहर है।

मेरी जनजातीय चित्रकारी में गहन रूचि होने का एक कारण आदिवासी थारू जनजाति है। थारू भारत नेपाल सीमा के दोनों तरफ तराई क्षेत्र के घने जंगलों के बीच निवास करती है जो कि भारत की जनजातियों में से एक उत्तर भारत की प्रमुख जनजाति है। उत्तर प्रदेश के अवध क्षेत्र के जिला बहराइच के बलाई गांव में मेरी जन्मभूमि है। यहां पर मेरा कई वर्ष व्यतीत करने का सौभाग्य रहा है। यहां की विशेषता थारू जनजाति का आवासीय होना है। थारू का समृद्ध सांस्कृतिक लोक परंपरा से युक्त

यहां इतिहास गौरवशाली रहा है। यह लोग नेपाल के दोनों तरफ के तराई क्षेत्र के सैकड़ों गांव में निवास करते हैं। इनकी कला और संस्कृति का हमारे लोक संस्कृति के साथ घनिष्ठ संपर्क है। थारू जनजाति की सभ्यता, संस्कार, संस्कृति, लोक कला वह अपने आप में लालित्यपूर्ण रही है। जिसका प्राचीन इतिहास से लेकर आधुनिक इतिहास तक विस्तार है। इनकी संस्कृति, इनकी सभ्यता पूरे अवध में ही नही अब पूरे विश्व में प्रसारित हो रही है।

कतिपय कारणों से अभी तक इनकी समृद्ध कला, प्रकाश में नहीं आयी। इनकी संस्कृति सभ्यता का अभी तक पूरे भारत में और उसके बाहर प्रचार नहीं हुआ। मेरा लक्ष्य है कि थारू जनजाति की लोक कला, संस्कृति, जीवन पद्धति जो हमारे जीवन का एक गौरवशाली अंग है, जिसको जनमानस के सामने लाया जाए ताकि लोग इसको और जान सकें।

मेरा लक्ष्य है कि थारू जनजाति की लोक कला, संस्कृति, जीवन पद्धति जो हमारे जीवन का एक गौरवशाली अंग है। जिसको जनमानस के सामने लाया जाए ताकि लोग इसको और जान सकें।

थारू जनजाति एक जनजाति नहीं पूरी एक लोक परंपरा है। इसको एक जाति के रूप में हम देखते हैं, तो पाते हैं कि उन्होंने हमारी विरासत को संभाल कर रखा है। नई पीढ़ी तक पहुंचाने तथा सुरक्षित और संरक्षित रखने के उद्देश्य से मैंने इस लोक जनजाति के जीवन पर शोध बहुत बडा कारक बनी। जनजाति चित्रों को मै जब भी देखती, निहारती तो मेरे मन में यह विचार आता था कि इतना सुंदर चित्र, इतनी सुंदर कला, इस धरोहर को सहेजना अति आवश्यक है। इन्हे सहेजने के लिए मैंने अपनी पुस्तक इन चित्रों का संरक्षण किया है।

इन चित्रों के संरक्षण के इस काम में मुझे काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। दूर-दूर तक लगभग साठ सत्तर गावों में जाना पड़ा इन चित्रों को एकत्रित करना आसान न था, लेकिन इतने सुंदर चित्र देखकर मैं काफी भाव विभोर हो जाती थी। मेरा एक ही प्रयास था। दूर दूर तक जाकर उनके चित्रों को देखना, निहारना, सहेजना, कुछ गावों की तो ऐसी विशेषता है जहां हर घर में कच्ची मिट्टी की दीवालों पर चित्र बने हैं। इन चित्रों को देखकर मैं चित्र सृजन के लिए काफी गंभीर हो जाती थी और चित्रों के सृजन के लिए काफी गंभीरता से 4 साल तक अथक प्रयास करती रही। इस सर्वेक्षण में मुझे जो भी लोक चित्र प्राप्त हुए वह अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण व आकर्षक लगे क्योंकि सारे चित्र बहुत गहरी, उभारदार, पारंपरिक रंगों का प्रयोग कर घर की सभी महिलाएं के सहयोग से सप्ताह भर में गीत और नृत्य एवं वादन के साथ बडे मनोयोग से बनाए गए हैं। इन चित्रों की एक विशेषता यह भी है कि गांव के हर घर में चित्र बनाए गए हैं। जनजातीय महिलाएं अपनी हर कला को लगन और निपुणता के साथ बनाती हैं। इस पूरी जीवन यात्रा में मेरे माता पिता, परिवार का बहुत बड़ा योगदान, सहयोग और आशीर्वाद रहा जिनके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती हूं। उन्होंने सदैव शुभाशीष, साहस, प्रेरणा और दिशा प्रदान की। यह कार्य सही मार्गदर्शन से ही सिद्ध हो पाया। मैं अपने सभी सहयोगियों, मित्रगण के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती हूं। आप सभी की निरंतर सहयोग, प्रेरणा, उत्साह, सहृदयता और सम्बल से मुझे इस कार्य को करने में सफलता मिली। मैं आप सबकी बहुत आभारी हूँ। ■

डिजिटल डिस्ट्रिक्ट रिपॉजिटरी

गुमनाम स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों की गाथाओं के संकलन का ऐतिहासिक अभियान

डॉ मुकेश कुमार

संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार का मंत्रालय है, जिस पर कला संरक्षण और संस्कृति को बढ़ावा देने का दायित्व है। प्रहलाद सिंह पटेल संस्कृति मंत्रालय के वर्तमान मंत्री हैं।

सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र, नई दिल्ली (संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार) एवं उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान (संस्कृति विभाग, उत्तर प्रदेश) के संयुक्त तत्वाधान में उत्तर प्रदेश के विभिन्न जनपदों में वहां के छात्रों, प्राध्यापकों, स्थानीय लोक कलाकारों, स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के परिवार वालों को आमंत्रित करके एक दिवसीय कार्यशालाएं आयोजित की जा रही हैं।

आज़ादी का अमृत महोत्सव

बड़ी कहानियाँ अक्सर हमारे ऐतिहासिक आख्यानों की सुर्खियाँ बनती हैं, लेकिन इतिहास केवल ऐतिहासिक घटनाओं के बारे में नहीं है - यह उन बहुत सी घटनाओं में आकार और चरित्र पाता है जो परिवर्तन के एक फ्लैशपॉइंट तक ले जाती हैं। जिले के सूक्ष्म स्तर पर भारत के स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े लोगों, घटनाओं और स्थानों की कहानियों को खोजने और दस्तावेज करने के प्रयास से एक डिजिटल डिस्ट्रिक्ट रिपॉजिटरी का निर्माण हुआ है। उक्त क्रम में 20 दिसम्बर, 2022 को लखनऊ विश्वविद्यालय के लोक प्रशाशन विभाग के सभागार में एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें श्री अतुल द्विवेदी - निदेशक, उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, प्रोफेसर मनोज दीक्षित, विभागाध्यक्ष, लोक प्रशासन विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, श्री ऋषि वशिष्ठ- निदेशक, सीसीआरटी, श्री आनंद कुमार - विशेष सचिव, संस्कृति विभाग, श्री दिबाकर दास -सहायक निदेशक, सीसीआरटी, श्री देव तनेजा, सीसीआरटी, डॉ मुकेश कुमार, प्रोजेक्ट क़्वार्डीनेटर, श्री शुभम श्रीवास्तव के साथ लखनऊ, हरदोई, सीतापुर, बाराबंकी, उन्नाव, रायबरेली, पीलीभीत, बरेली, आजमगढ़, कानपुर , कानपुर देहात, गोंडा, बस्ती, अयोध्या, हाथरस, शाहजहांपुर, गोरखपुर, इटावा आदि जनपदों से लगभग 120 लोगों ने प्रतिभाग किया।

डिजिटल डिस्ट्रिक्ट रिपॉजिटरी में कहानियों को निम्न रूप से वर्गीकृत किया गया है।

1. लोग और व्यक्तित्व
2. उल्लेखनीय घटनाएं
3. छिपे हुए खजाने
4. निर्मित और प्राकृतिक विरासत
5. जीवित परंपराएं और कला रूप

कार्यशाला के बाद अब तक 238 कहानियां प्राप्त हो चुकी हैं। लखनऊ परिक्षेत्र से डॉ मुकेश कुमार, प्रोजेक्ट क़्वार्डीनेटर, डॉ शिखा भदौरिया, मंजरी तिवारी, डॉ अनामिका सिन्हा, क्षेत्रीय सहायक निदेशक, इग्नू, लखनऊ, डॉ बंदना सिंह, सहायक आचार्य, डॉ अभिषेक कुमार सिंह, सहायक आचार्य, शिम्पी मौर्या, शोध छात्रा और डॉ धनंजय चोपड़ा की गुमनाम स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों पर लिखी गई कहानियां संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार की वेबसाइट पर अपलोड हो चुकी हैं।

दूसरी कार्यशाला का आयोजन 15 मार्च, 2023 को सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र, नई दिल्ली (संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार) एवं उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, संस्कृति विभाग, उत्तर प्रदेश तथा बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झाँसी के संयुक्त तत्वाधान में एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन गाँधी सभागार, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय में किया गया।

कार्यशाला के मुख्य अतिथि बुंदेलखंड विश्वविद्यालय के अधिष्ठाता छात्र कल्याण प्रो सुनील काबिया, विशिष्ट अतिथि - हरगोविंद कुशवाहा- उपाध्यक्ष अंतर्राष्ट्रीय बौद्ध शोध संस्थान, श्री अतुल द्विवेदी - निदेशक, उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, डॉ मुकेश कुमार, प्रोजेक्ट क़्वार्डीनेटर, डॉ मोहमद नईम, संयोजक, कार्यशाला, देव तनेजा, पत्रकार मोहन नेपाली, डॉ सुमेध थारो, प्रो. पुनीत विसारिया सहित विश्वविद्यालय परिसर एवं सम्बद्ध महाविद्यालयों के शिक्षक, शोध छात्रों सहित जनपद- ललितपुर, महोबा, जालौन, हमीरपुर, चित्रकूट तथा बाँदा से इतिहास में रूचि रखने वाले 110 प्रतिभागियों ने भाग लिया। कार्यशाला के उपरांत झाँसी परिक्षेत्र से 10 कहानियां प्राप्त हो चुकी हैं। झाँसी से 500 कहानियां खोजने का लक्ष्य है।

कई जनपदों के प्रतिभागियों को मिलाकर किसी विश्वविद्यालय/ महाविद्यालयों में अलग-अलग अगस्त 2023 तक 5 कार्यशालाएं कराये जाने का लक्ष्य है। जिन प्रतिभागियों द्वारा लिखी गई कहानियां सी.सी. आर.टी. की वेबसाइट पर अपलोड हो रही हैं उनको प्रत्येक स्टोरी का मानदेय रूपये 2000/- भुगतान किया जा रहा है।

कार्यशालाएं आयोजित करने का कारण यह है कि लोगों में स्व की भावना जागृत हो। अपने पूर्वजों पर गर्व करें, उनके बारे में खोजें, जानें और लिखें, पाश्चात्य दृष्टिकोण बदलें। जिससे देश, दुनिया को भारत के वास्तविक इतिहास की जानकारी हो । ▪

(लेखक डी डी आर प्रोजेक्ट उत्तर प्रदेश के को-आर्डिनेटर हैं और लखनऊ विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग में कार्यरत हैं।)

विशेष-लोकगीत

अइयो अइयो हो लाला हरदौल
तुमाये बल पे ब्याह रचो

कन्या बैठी जोरे हाथ
आ रही द्वारे में बरात
तुम बिन कौन पूजिये भात
तुमसे लिपटी है प्रेम की डोर
तुमाये बल पे ब्याह रचो

जेठे भइया जुलम गुजारे
तुम तो भइया स्वर्ग सिधारे
तुम बिन कारज कौन संवारे
बीरन बहना की तुमको है कौल
तुमाये बल पे ब्याह रचो
भइया तुमसे आस हमारी
तुम बिन को करिहें तैय्यारी
बहना तुमरी हैं दुखियारी
बीरन तुमरे आ गई गैल
तुमाये बल पे ब्याह रचो

भइया भानेज को है काज
तुम बिन कौन सजऐहइ साज
तुमरे हाथे हमारी लाज
तुम ना आहो तो जग करिहें चौल
तुमाये बल पे ब्याह रचो ▪

मंजू नारायण
लोक रचनाकार

चित्र पहेली

प्रतियोगिता संख्या - 001/23

चित्र पहेली की इस प्रतियोगिता में ऊपर दिए गए चित्र को आपको पहचानना और लिखकर भेजना है। हमारा पूरा पता कवर पेज के अंदर के पृष्ठ पर अंकित है।

चित्रकूट के हस्तशिल्पियों की सुपारी के खिलौनों की दावेदारी

हस्तशिल्पी अपने हुनर और कला को प्रदर्शित करने के अनूठे माध्यमों को आधार बनाते हैं। ऐसी ही है चित्रकूट में पान में खाई जाने वाली सुपारी पर कलाकृतियां उकेरने की कला। ऐसा नहीं कि यह कला कोई नवीन आधुनिक शैली हो। वास्तव में परम्परा से सुपारी के खिलौने और मूर्तियां चित्रकूट में बनाई जाती रहीं हैं। अब इनमें नित नवीन प्रयोग हो रहे हैं। सुपारी के खिलौने और कलाकृतियां ऐसे परिवारों के लिए जीवन यापन का एक जरिया तो हैं ही लेकिन इससे कलाकारों के साथ ही चित्रकूट की ख्याति भी जुड़ी है। सुपारी के खिलौनों ने चित्रकूट के कलाकारों को राष्ट्रीय स्तर पर गौरव दिलाया है। वर्तमान में यहां के कलाकारों की कलाकृतियां दूसरे राज्यों में भी भेजी जा रही हैं। जिस तरह से चित्रकूट में सुपारी के खिलौने बनाए जाते हैं वह दूसरे स्थानों में बहुत कम हैं। चित्रकूट की साख कला के क्षेत्र में सुपारी के सृजन के साथ ही गहरी परम्परा की जड़ों से जुड़ी है।

सुपारी से बनी चित्रकूट की इन कलाकृतियों और खिलौनों को गिफ्ट देने में इस्तेमाल किया जा रहा है। मांग इनकी इतनी अधिक है कि एक से अधिक की संख्या में जरूरत पडने पर एडवांस में आर्डर देना पड़ता है। चित्रकूट में आने वाले राजनेताओं और अन्य सेलीब्रिटी को भी यही भेंट किए जा रहे हैं। जिससे इनकी ब्रांडिंग भी हो रही है।

इसकी शुरुआत के संबंध में बताया जाता है कि राजघराने द्वारा सुपारी को पान के साथ इस्तेमाल करने के लिए अलग-अलग डिजाइन से कटवाने की शुरुआत की गई थी। उसी की डिजाइन बनाते-बनाते कलाकृतियां भी सामने आने लगीं। चित्रकूट के इन कलाकृतियों को बनाने वालों के परिवार तीन पीढ़ियों से यह काम कर रहे हैं। इनका यह प्रमुख पेशा है। यह परिवार चित्रकूट दशकों से सुपारी के खिलौने और मुर्तियां बनाई जाती हैं। इनके कलाकारों ने अपने हुनर से चित्रकूट को विशेष प्रतिष्ठा दिलवाई है।

पानदान में सुपारी को तरह तरह के रंगढंग में पेश करने से हुई थी शुरुआत

पहले रजवाड़ों में पान मेहमानों को परोशने के लिए नक्काशीदार पानदान का उपयोग होता था, जिसमें पान में मिलाई जाने वाली समग्रिया रखी जाती थी, चूंकि सुपारी सख्त होती है और मेहमानों को की सहूलियत के लिए इसे लच्छों में काट करके पेश किया जाता था, राजपरिवार के आदेश पर ही राजदरबार के लिए लच्छेदार सुपारी काटी जाती थी। जिसे काटते काटते काटने वालों की कला की भावनी जागी और उन्होंने

सुपारी को अपनी कला के प्रदर्शन का आधार बना लिया, और वहीं से निकली सुपारी में शिल्प तराशने की यह विधा।

समय के साथ बाजार की मांग के अनुसार पहले छोटी छोटी कलाकृतियां, फिर खिलौने भी बनाए जाने लगे। अब यह कला इतनी विस्तार पा चुकी है कि विशिष्ट आयोजनों में अतिथियों और विशिषटजनों को कार्यक्रमों में सुपारी की गणेश प्रतिमा उपहार स्वरूप दी जाती है। बाहर से आने वाले अतिथि को सुपारी के ही खिलौने दिए जाते हैं। ■

आगरा "भगत" की पुनरुद्धार गाथा

इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में जब स्थानीय संस्था 'रंगलीला' ने मृतप्राय हो चुकी आगरा की चार सदी पुरानी लोक नाट्य कला "भगत" के पुनरुद्धार के लिए सांस्कृतिक आंदोलन छेड़ा, तो कोई यह मानता नहीं था कि 50 साल पहले क़ब्र में दफ़्न हो चुकी इस लोक विधा में दोबारा सांस फूंकी जा सकेगी। कुछ ही वर्षों की सघन कोशिशों के बाद जब यह सच साबित हुआ तो न सिर्फ आगरा बल्कि देश भर के लोग दाँतों तले अंगुलियां दबाते रह गए। यह देश की पहली लोक नाट्य कला थी जिसे पुनर्जीवित किया जा सका था। प्रस्तुत है 'रंगलीला' के निदेशक और इस नवजागरण आंदोलन के सूत्रधार अनिल शुक्ल की पुस्तक के अंश।

अनिल शुक्ल
शोधकर्ता

हाल के डेढ़ दशकों में आगरा में एक नया लोक सांस्कृतिक आंदोलन उठ खड़ा हुआ है। संस्कृतिकर्मियों, लोक कलाकारों और दर्शकों का यह मिला जुला प्रबल आंदोलन लोक नाट्य 'भगत' के पक्ष में है जो 5 दशक पहले लुप्त हो गई थी और अब फिर से खड़ी हो रही है। आगरा का यह प्रयोग दर्शाता है कि लोक कलाओं के संरक्षण के लिए आज के समाज और दर्शकों की सांस्कृतिक सोच और समझ के साथ तालमेल बैठा कर, उसके स्वरूप को (मूल आकार को छेड़े बिना) एक नई संरचना के रूप में पेश किया जाना जरूरी है। आगरा की 400 साल पुरानी इस 'पुनर्नवा' गाथा को जिस तरह हम लोग गढ़ने का प्रयास कर रहे हैं, हमें उम्मीद है कि हमारे ये अनुभव हिंदी भाषी क्षेत्र में कार्यरत लोक नाट्य और नाटक से जुड़े अन्य मित्रों के लिए भी नए उदाहरण की भूमिका अदा करेंगे।

'भगत' आगरा की 4 सदी पुरानी लोक नाटकों की परंपरा है। 1930 और 40 के दशक में मोती कटरा में 'भगत'खेली जाती रही और जौहरी राय पहले ख़लीफ़ा बने रहे। अखाड़े में कलाकार पिछड़े, दलित और मुसलमान थे और शुरू में वे ही इसके आयोजक भी हुआ करते थे।

'भगत' आगरा की 4 सदी पुरानी लोक नाटकों की परंपरा है। 20वीं सदी के पूर्वार्द्ध तक आगरा के विभिन्न मोहल्लों और बस्तियों में इसके 18 अखाड़े (कमेटियां) हुआ करते थे। इन अखाड़ों की अपनी भौगोलिक सीमा रेखा थी और वे इसके बाहर 'भगत' का प्रदर्शन नहीं कर सकते थे। एक अखाड़े का अभिनेता दूसरे अखाड़े में शामिल नहीं हो सकता था, यद्यपि साजिन्दों पर यह अनुशासन नही लागू होता था। गुजरी सदी के 50 के दशक से ये अखाड़े निष्क्रिय होते चले गए और 70 का दशक आते-आते 'भगत' का कोई नामलेवा नहीं रहा।

वस्तुतः 17वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आगरा के ताजगंज जाते थे। अपराह्न से शुरू होकर देर शाम तक चलने वाली ये प्रस्तुतियां 'भांड भगत' कहलाती थीं। मोहल्ले से लेकर आसपास के गांवों के सामान्य जनों में यह अत्याधिक लोकप्रिय थे जबकि अभिजात्यों में ये

घृणा की दृष्टि से देखे जाते थे। वे लोग कभी इसकी प्रस्तुतियों में इन किसी रूपों में शामिल नहीं होते थे। यद्यपि इन कृतियों और प्रस्तुतियों का कोई डॉक्यूमेंटेशन उपलब्ध नहीं है, लेकिन स्थानीय कहावतों, लोक गीतों और नज़ीर अकबराबादी की कविताओं में इनका छुटपुट उल्लेख मिलता है। शासन की तरफ से 18वीं सदी में इन पर सख्त रोक लगा दी गई और अगले 75-80 साल तक ये नहीं खेले जा सके।

सन 1827 में स्थानीय मोहल्ला मोती कटरा के भांड जाति के कवि और लोक संगीतकार जौहरी राय अपनी ससुराल अमरोहा (मुरादाबाद) से स्वांग की 4 'किताबें' (स्क्रिप्ट) लेकर आए। उन्होंने इनमें से एक 'रूप बसंत' को नए सिरे से रचा। ब्रज और आगरा की खड़ी बोली का उसमें भाषाई इस्तेमाल किया और संगीत में, जहां-जहां संभव था ब्रज की लोक धुनों का समावेश किया । यही नहीं, आगरा की खयालगोई परंपरा के कुछ अंशों का भी श्री राय ने उपयोग किया और कार्तिक की एक शाम मोती कटरा के खुले मैदान में पाड़ (मंच) बांधकर सैंकड़ों स्थानीय दर्शकों के बीच उन्होंने इसे यह कहते हुए प्रस्तुत किया कि "हम जो खेल खेल रहे हैं, वह भगत कही जाएगी।"

'रूप बसंत' आधुनिक भगत का पहला प्रदर्शन था और भांट जौहरी राय इस विधा के जनक थे। इस तरह मोती कटरा में भगत का पहला अखाड़ा स्थापित हुआ। बाकी की 3 स्वांग स्क्रिप्ट का क्या हुआ, इस बारे में कोई ठोस दस्तावेज उपलब्ध नहीं है परंतु किविदंती यह भी मशहूर है कि 'रूप बसंत'की स्थानीय प्रतिक्रिया से दुखी होकर जौहरी राय ने शेष 3 किताबों को कुएं में फेंक दिया। वस्तुतः 'रूप बसंत' अंग्रेजों के आगमन से भारतीय समाज में आ रहे व्यापक बदलावों को आधार बना कर इनके विरुद्ध लिखी गई थी। इसका परिवेश राज दरबार था और मुख्य पात्र राजा, उसकी युवा रानी और पहली रानी से जन्मे पुत्र रूप और बसंत थे। प्रेम, घृणा, षडयंत्र आदि इसकी 'थीम'के हिस्से थे।

1930 और 40 के दशक में मोती कटरा में 'भगत' खेली जाती रही और जौहरी राय पहले ख़लीफ़ा बने रहे। मोती कटरा की भगत की चर्चा शहर के दूसरे इलाकों में भी पहुंची और अन्य मोहल्लों के दर्शक भी

इसकी प्रस्तुति के समय मोती कटरा में उमड़ने लगे। 40 के दशक में रावतपाड़ा और नमक की मंडी मोहल्लों में 'भगत' के अखाड़े गठित हुए। प्रारंभिक दौर की 'आधुनिक भगत' के कलाकारों में पिछड़ी और दलित जातियों के पुरुष थे। चूंकि भगत में सारा ज़ोर गायकी पर था लिहाजा ये ऊंची आवाज में गा सकने वाले सुरीले गलों का समूह था। मंच के तीन तरफ दर्शक बैठते थे। साउंड टेक्नोलॉजी तब विकसित नहीं हुई थी लिहाजा प्रत्येक अभिनेता अपने एक-एक जवाब (संवाद), तीन तरफ घूम-घूम कर गाता था।

मुगल काल में आगरा राजधानी थी। यही वजह है कि यह व्यापार और व्यवसाय की भी राजधानी थी और व्यापारियों के मुख्यालय आगरा में ही थे। बाद में राजधानी के दिल्ली स्थानांतरित होने और आगे चलकर ब्रिटिश 'ईस्ट इंडिया कम्पनी' का अधिपत्य स्थापित हो जाने के बाद भी आगरा देश का महत्वपूर्ण व्यवसायिक केन्द्र बना रहा। मोती कटरा अखाड़े में कलाकार पिछड़े, दलित और मुसलमान थे और शुरू में वे ही इसके आयोजक भी हुआ करते थे।

जल्द ही सोना-चमड़े के व्यापारियों ने 'भगत' के आयोजकों को सहायता देना शुरू कर दिया। व्यापारियों और व्यवसाइयों के चंदों से भगत के मंच 'ग्लैमरस' बनने लगे। प्रस्तुति शाम से देर रात की तरफ खिसकने लगी और मंच मशाल और तेल लैम्पों से जगमगाने लगे। धीरे-धीरे भगत में इन व्यापारियों के 'स्वर' प्रभावशाली होने लगे और कलाकारों की आवाजें दबने लगीं। 'ख़लीफ़ा की पदवी भी कलाकारों के साथ इन व्यापारियों में 'बंटने लगीं।

व्यवसाइयों के आगमन से 'भगत' अखाड़ों का प्रसार भी चालू हो गया। एक इलाके की दालमंडी के अखाड़े का जवाब दूसरे इलाके की अनाज मंडी के व्यापारियों ने अपने यहां अखाड़ा चालू करके दिया तो एक जगह की सुनार मंडी के जवाब में दूसरे क्षेत्र की जवाहारात मंडी के जौहरियों ने अपने अखाड़ा चालू करके 'भगत' खिलवानी शुरू कर दी।

20वीं सदी की शुरूआत होते होते आगरा की सभी 12 मंडियों में 12 अखाड़े थे। बाद में इन अखाड़े वाले कुछ व्यवसाई ख़लीफ़ा लोगों ने दूसरी जगहों पर जा कर बस गए और वहां उन्होंने अपने उप अखाड़े स्थापित कर लिए और इस तरह इन अखाड़ों की संख्या 18 हो गई। 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में भगत आगरा से निकल कर मथुरा और हाथरस तक पहुंची। वहां भी कुछ अखाड़े स्थापित हुए। 20वीं शताब्दी के पूवार्ध में पहले वहां अखाड़े मृतप्रायः हुए और बाद में आगरा में जैसा कि ऊपर कहा गया है 17वीं शताब्दी की 'भांड-भगत' से निकले व्यंग्य और कटाक्ष के बोल शुरूआती 'भगत' के स्वरों में भी मौजूद रहे। 'रूप बसंत' से शुरू हुआ अंग्रेज विरोध तब तक आगरा के भगत मंचों पर प्रखर रहा जब तक इन मंचों पर कलाकारों का दबदबा था।

जनवरी 2006 में सांस्कृतिक संस्था 'रंगलीला' के गठन के वक्त ही हम लोगों ने 'भगत'के पुनरुद्धार का संकल्प कर लिया था। हमारा नारा था 'नए दौर की नई भगत।

जब व्यवसाइयों की भीड़ ने इन मंचों पर क़ब्ज़ा जमा लिया तो भगत में 3 तरह के बदलाव साफ-साफ दिखने लगे।

(1) भगत बहुत महंगी हो गई। यह महंगाई मंच सज्जा से लेकर वेशभूषा, आभूषण और श्रंगार सभी जगह दिखने लगी। नहीं महंगा हुआ, तो कलाकारों का न्यौछावर (पारितोषिक), जो उनके लिए पारिश्रमिक सरीखा होता था। पाड़ (स्टेज क्राफ्ट) में जस्ते, चांदी और सोने के पत्तर चिपकाये जाने लगे। अभिनेता 5 से 10 किलो के असली सोने-चांदी के आभूषण पहन कर अभिनय करते। ये अखाड़ों की कलात्मक प्रतिस्पर्धा नहीं बल्कि व्यापारियों की व्यवसायिक प्रतिद्वंद्विता थी जो कला की आड़ में व्यावसायिक प्रतिद्वंदी को नीचा दिखाना चाहती थी ताकि वे अपने व्यापार में उसकी भली-भांति 'शो केसिंग' कर सकें।

(2) सामाजिक कठिनाईयां और व्यवस्था विरोध के स्वर गायब कर दिए गए। सामाजिक दुराचारों की जगह मिथकीय कथानक उपजने लगे और व्यवस्था विरोध की जगह 'प्रभु' वंदना के स्वर प्रमुख हो गए। सन 1857 के 'विद्रोह' के बाद मथुरा के एक अखाड़े ने ईस्ट-इंडिया कम्पनी की प्रशंसा में यमुना के घाट पर 'भगत' खेलने की कोशिश की। क्रोधित दर्शकों ने मंच तहस-नहस कर डाला और अखाड़ा हमेशा के लिए बंद हो गया।

(3) 'भगत' मंच पर लक्ष्मी की ताबड़तोड़ बारिश से सरस्वती लुप्त होती चली गई और इस सब का परिणाम यह हुआ कि 20 वीं सदी के पूर्वार्द्ध में जबकि देश 'असहयोग, 'भारत छोड़ो' तथा किसान-मजदूर आंदोलनों की भट्टी में तप रहा था और साहित्य संस्कृति के मंचों पर इनकी बड़ी-बड़ी छाया मंडरा रही थी तब 'भगत' के मंच शुष्क दैवीय राग अलाप रहे थे। आगरा और ब्रज राजनीतिक दृष्टि से बेहद चार्ज थे तो भगत के ऐसे मंचों के प्रति दर्शकों का मोह भंग हो जाना स्वाभाविक था। यही कारण है कि आजादी से पहले ही भगत की प्रस्तुतियों में दर्शकों की तादाद नगण्य होने लग गई और आजादी के बाद अखाड़े सूनसान होते चले गए।

60 और 70 के दशक में जबकि भारतीय समाज चेतना के नए पुर्जों को चीन्हने की कोशिश में जुटा था और अपनी समझ के नए मानदंडों को विकसित कर रहा था तब भगत के ख़लीफ़ा यह न सोच पाये कि उनके दर्शकों की सांस्कृतिक समझ कहां जा रही है और मनोरंजन की उनकी नई चाहतें क्या हैं। वे यह अन्दाज़ा भी नहीं लगा पाये कि उनका समाज किन कठिनाईयों से जूझ रहा है और दर्शकों के समक्ष चुनौतियां क्या हैं? बावजूद इन सारी नाकारात्मकताओं के, भगत कलाकारों के स्वरों में बुलंदी और मिठास का समावेश तब भी बना रहा।

अखाड़ों में जब दैनंदिन तालीम ठंडी होने लगी तो वे अपने घर और कार्यस्थली पर रियाज़ और सहयोगियों के मनोरंजन का काम एक साथ करने लगे। सुनार का काम करनेवाले मजदूर चांदी की पाजेब जोड़ते-जोड़ते 'दोहे' का गायन करते तो ठठेरे कारीगर बर्तन निर्माण की ठोंका-पीटी को ताल मानकर 'चैबोले' गाते जाते और कूणेभार के कारीगर अपनी ठोंकापीटी के बीच 'बहर -ए -तबील' की धुनें निकालते। पेठे के कारखानों के बाहर श्रोता इस आस में खड़े मिल जाते कि शायद 'लावनी' के बोल सुनने को मिल जाएं।

अखाड़ों से निकल कर गायकी का यह लोक नाट्य 60 के दशक तक कारखानों में पहुंच गया था लेकिन 70 का दशक आते आते मौन हो गया।

क्रमशः...

अगले अंक में जारी

'पानी पर रंगोली' की अदभुत कला

उत्तर प्रदेश में रंगोली की महाभारत कालीन शैली 'पानी पर रंगोली' बनाए जाने की विधा को पुनर्जीवित करने की कोशिश प्रारम्भ हो चुकी है। उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, संस्कृति विभाग उत्तर प्रदेश एवं ललित कला अकादमी क्षेत्रीय केंद्र,लखनऊ के संयुक्त तत्वावधान में तीन दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया।

भारत में उत्सवधर्मिता का पर्याय है रंगोली। रंगोली भारत के किसी भी प्रांत की हो, वह लोक कला है। रंगोली के तत्व भी लोक से ही लिए गए हैं । इसके लिए शुभ प्रतीकों को पीढ़ियों से उसी रूप में बनाया जा रहा है। रंगबिरंगी रंगोली को नई पीढी भी पारंपरिक रूप से ही इस कला को सीख रही है। अब तक जमीन पर और दिवारों पर रंगोली के रंग बहुत प्रचलित हुए हैं, पर महाभारत कालीन पानी पर रंगोली के शिल्प का प्रसार नहीं हुआ। कुछ गिनेचुने कलाकारों ने आधुनिक युग में इसे पुनर्जीवित किया है, ऐसी ही एक साधक कलाकार श्रीजीता मोहनराव रावतोले के नेतृत्व में उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, संस्कृति विभाग उत्तर प्रदेश ने इस कला के विस्तार के लिए एक कार्यशाला का आयोजन किया।

ललित कला अकादमी अलीगंज, लखनऊ में 12 जनवरी से 14 जनवरी 2023 के बीच आयोजित इस विशेष कार्यशाला में कुल 200 छात्र छात्राओं ने प्रतिभाग किया। युवा प्रतिभागियों में पानी पर रंगोली की कला को सीखने की ललक साफ देखने को मिली। इन प्रतिभागियों में नेताजी सुभाष चंद्र बोस गर्ल्स पीजी कॉलेज, कला एवं शिल्प महाविद्यालय, लखनऊ व केंद्रीय विद्यालय,अलीगंज, लखनऊ सहित डॉ शकुंतला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ और गोयल इंस्टीट्यूट के ललित कला विभाग के साथ ही बाबू त्रिलोकी नाथ इंटर कॉलेज, काकोरी, लखनऊ एवं ललित कला अकादमी से जुड़े कलाकारों के अतिरिक्त बहुत से स्वतंत्र कलाकारों ने भी प्रतिभाग किया। कार्यशाला में प्रतिभाग करने वाले बच्चों ने पानी पर रंगोली के साथ ही जमीन पर रंगोली, मोम पर रंगोली आदि का भी प्रशिक्षण प्राप्त किया। इस कार्यशाला की विशेषता यह रही कि सभी ने स्वयं अपनी रचनात्मकता के अनुरूप विविध विषयों को रंगोली में उकेरा।

प्रतिभागी कलाकारों ने लोकप्रिय राजनेताओं के चित्रों को रंगोली का विषय बनाया। कार्यशाला के समापन के अवसर पर अपने उद्बोधन में उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान के निदेशक अतुल द्विवेदी ने बताया की इस कार्यशाला में रंगोली का प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले कलाकारों को आगे भी प्रशिक्षण देकर शिक्षक के के रूप में प्रदेश भर में होने वाली कार्यशालाओं में भेजा जाएगा। इस कार्यशाला की शिक्षिका श्रीजीता मोहनराव राव तोले ने महाभारत कालीन पानी पर रंगोली की इस कला की बारीकियों से प्रतिभागियों को प्रयोगों के सात बताया और सिखाया। प्रतिभागियों की रूचि को देखकर उन्होंने कहा कि यह एक प्राचीन परंपरा है जिससे हमें अपनी पीढ़ी को प्रशिक्षण के माध्यम से सिखाना ही होगा क्षेत्रीय ललित कला अकादमी ने सभी प्रतिभागियों के उचित प्रशिक्षण में उल्लेखनीय सहयोग दिया। कार्यशाला में ललित कला अकादमी उत्तर प्रदेश के पूर्व उपाध्यक्ष गिरीश चंद्र ने प्रतिभागियों को भारत की लोक परंपरा और रंगोली से जुड़ने के लिए प्रोत्साहित किया। ■

जमीन, दीवार के साथ ही रंगोली के लिए कलाकारों ने अब पानी को भी माध्यम बना लिया है। इसके लिए एक टब या टैंक में पानी को लेकर स्थिर व समतल क्षेत्र में पानी को डाल दिया जाता है। कोशिश यह की जाती है कि पानी हवा या किसी अन्य तरह के संवेग से प्रभावित ना हो, इसके बाद चारकोल के पावडर को छिड़क दिया जाता है। इसी चारकोल के ऊपर कलाकार सहजता के साथ स्टेन्सिल और कई तरह की सामग्रियों के साथ रंगोली सजाते हैं। इस तरह की रंगोली आकर्षक और भव्य नजर आती है।

रंगो के साथ ही भरे हुए पानी पर फूलों की पंखुडियों और दियों की सहायता से भी रंगोली बनाई जाती है। स्थिर पानी की सतह पर रंगों को रोकने के लिए चारकोल की जगह, डिस्टेंपर या फिर पिघले हुए मोम का भी प्रयोग किया जाता है। कुछ रंगोलियाँ पानी के भीतर भी बनाई जाती हैं। इसके लिए एक कम गहरे बर्तन में पानी भरा जाता है फिर एक तश्तरी या ट्रे पर अच्छी तरह से तेल लगाकर रंगोली बनाई जाती है। बाद में इसपर हल्का सा तेल स्प्रे कर के धीरे से पानी के बर्तन की तली में रख दिया जाता है। तेल लगा होने के कारण रंगोली पानी में फैलती नहीं।

वर्ष 2022-23 में हुए समझौता ज्ञापन

सांस्कृतिक स्त्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र, भारत, नई दिल्ली के साथ अनुबंध

निदेशक, उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ और सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र, नई दिल्ली के निदेशक श्री ऋषि वशिष्ठ के बीच 21 दिसम्बर 2022 को निरंतर, तालमेल और प्रभावी सहयोग को बढ़ावा देने के उदेश्य से यह अनुबंध किया गया। इस समझौता ज्ञापन (एमओयू) के साथ दोनो ही पक्ष अनुसंधान और प्रशिक्षण के पारस्परिक रूप से वैज्ञानिक प्रयासों को समृद्ध करने के लिए अकादमिक सहयोग करेंगे। इस अवसर पर माननीय मंत्री संस्कृति एवं पर्यटन श्री जयवीर सिंह, प्रमुख सचिव श्री मुकेश मेश्राम व सीसीआरटी के अध्यक्ष श्री इन्दुकर जी उपस्थित रहे।

एन0टी0पी0सी0 लि0 के साथ अनुबंध

उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ और एन0टी0पी0सी0 लि0 के बीच 21 दिसम्बर 2022 को निरंतर, तालमेल और प्रभावी सहयोग को बढ़ावा देने के उदेश्य से यह अनुबंध किया गया। इस समझौता ज्ञापन (एमओयू) के साथ दोनो ही पक्ष प्रदेश के विभिन्न अंचलों में कला संस्कृति के प्रचार प्रसार के साझा प्रयासों को गति देंगे। इस अवसर पर माननीय मंत्री संस्कृति एवं पर्यटन श्री जयवीर सिंह, प्रमुख सचिव श्री मुकेश मेश्राम जी उपस्थित रहे।

बुन्देलखण्ड महाविद्यालय, झाँसी के साथ अनुबंध

निदेशक, उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ और बुन्देलखण्ड महाविद्यालय, झाँसी के प्राचार्य प्रो. एस. के. रॉय के बीच 21 दिसम्बर 2022 को निरंतर, तालमेल और प्रभावी सहयोग को बढ़ावा देने के हेतु यह अनुबंध किया गया। इस समझौता ज्ञापन (एमओयू) के साथ दोनो ही पक्ष अनुसंधान और प्रशिक्षण के पारस्परिक रूप से वैज्ञानिक प्रयासों को समृद्ध करने के लिए अकादमिक सहयोग करेंगे, साथ ही कला संस्कृति के प्रचार-प्रसार के साझा प्रयासों में भागीदार होंगे। इस अवसर पर माननीय मंत्री संस्कृति एवं पर्यटन श्री जयवीर सिंह, प्रमुख सचिव श्री मुकेश मेश्राम व अन्य गणमान्य लोग उपस्थित रहे।

बुन्देलखण्ड विश्वविघालय झाँसी के साथ अनुबंध

निदेशक, उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ और बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी के प्रतिनिधि एसो.प्रो. श्री नईम के बीच 21 दिसम्बर 2022 को निरंतर, तालमेल और प्रभावी सहयोग को बढ़ावा देने के उदेश्य से यह अनुबंध किया गया। इस समझौता ज्ञापन (एमओयू) के साथ दोनो ही पक्ष अनुसंधान और प्रशिक्षण के पारस्परिक रूप से वैज्ञानिक प्रयासों को समृद्ध करने के लिए अकादमिक सहयोग करेंगे। इसके साथ ही कला संस्कृति के प्रचार प्रसार के साझा प्रयासों में भागीदार होंगे। इस अवसर पर माननीय मंत्री संस्कृति एवं पर्यटन श्री जयवीर सिंह, प्रमुख सचिव श्री मुकेश मेश्राम व विभाग एवं संसथान के अन्य लोग उपस्थित रहे।

छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय के साथ अनुबंध

निदेशक, उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ और छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर के कुलपति प्रो. वी. के पाठक के बीच यह अनुबंध 18 अक्टूबर 2022 को लखनऊ में एक निरंतर, तालमेल और प्रभावी सहयोग को बढ़ावा देने के उदेश्य से यह अनुबंध किया गया। इस समझौता ज्ञापन (एमओयू) के साथ दोनो ही पक्ष अनुसंधान और प्रशिक्षण के पारस्परिक रूप से वैज्ञानिक प्रयासों को समृद्ध करने के लिए अकादमिक सहयोग करेंगे। इस अवसर पर माननीय मंत्री संस्कृति एवं पर्यटन श्री जयवीर सिंह जी उपस्थित रहे।

उ0प्र0 राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

निदेशक, उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ और उ0प्र0 राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय इलाहाबाद की कुलपति प्रो. सीमा सिंह के बीच यह अनुबंध 18 अक्टूबर 2022 को लखनऊ में एक निरंतर, तालमेल और प्रभावी सहयोग को बढ़ावा देने के उदेश्य से यह अनुबंध किया गया। इस समझौता ज्ञापन (एमओयू) के साथ दोनो ही पक्ष अनुसंधान और प्रशिक्षण के पारस्परिक रूप से वैज्ञानिक प्रयासों को समृद्ध करने के लिए अकादमिक सहयोग करेंगे। इस अवसर पर माननीय मंत्री संस्कृति एवं पर्यटन श्री जयवीर सिंह जी उपस्थित रहे।

गोविन्द बल्लभ पन्त सामाजिक विज्ञान संस्थान, प्रयागराज

निदेशक, उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ और गोविन्द बल्लभपन्त सामाजिक विज्ञान संस्थान, प्रयागराज के प्रो. बद्रीनारायण के बीच यह अनुबंध 18 अक्टूबर 2022 कद लखनऊ में एक निरंतर, तालमेल और प्रभावी सहयोग को बढ़ावा देने के उदेश्य से यह अनुबंध किया गया। इस समझौता ज्ञापन (एमओयू) के साथ दोनो ही पक्ष अनुसंधान और प्रशिक्षण के पारस्परिक रूप से वैज्ञानिक प्रयासों को समृद्ध करने के लिए अकादमिक सहयोग करेंगे। इस अवसर पर माननीय मंत्री संस्कृति एवं पर्यटन श्री जयवीर सिंह जी उपस्थित रहे।

संस्कृति, विरासत, परंपरा, पुरातन और नूतन ज्ञान विज्ञान का साश्वत विस्तारक 'रेडियो जयघोष'

संचार माध्यमों के मूल सरोकारों से जुड़ने से जनजागृति के नए युग का सूत्रपात होगा। इसी दिशा में संस्कृति विभाग ने 'रेडियो जयघोष' प्रारम्भ किया है।

लखनऊ में संगीत नाटक अकादमी परिसर में स्थित स्टूडियो से संचालित रेडियो निरंतर अपने विशिष्ट कार्यक्रमों के माध्यम से लोकप्रिय हो रहा है। "रेडियो जयघोष" 107.8 मेगाहर्ट्ज पर शुरू हुआ है और हर दिन सुबह 6 से रात 10 बजे तक कार्यक्रम प्रसारित कर रहा है। रेडियो जयघोष के मोबाइल एप्लिकेशन और सोशल मीडिया पन्नों से भी कार्यक्रमों तक पहुंच हो रही है।

दैनिक रेडियो कार्यक्रम "पराक्रम" और "शौर्य नगर" में राज्य के सभी 75 जिलों के लोककथाएं शामिल की गईं और स्वतंत्रता पूर्व और बाद के दोनों युगों के बहादुर सैनिकों के साथ-साथ "रेडियो जयघोष" पर अनसुने नायकों की गाथाएं भी शामिल की गईं।

वहीं कला यात्रा कार्यक्रम में प्रदर्शन कलाओं पर प्रस्तुतियां, उत्तर प्रदेश के व्यंजनों पर कार्यक्रम राज्य की रसोई, रंगमंच कलाकारों पर आधारित कार्यक्रम रंग शाला, सरकारी पहल पर आधारित कार्यक्रम राज्य की रफ्तार और "रेडियो जयघोष" पर दृश्य कला पर रंग यात्रा जैसे कार्यक्रम प्रसारित किए जा रहे हैं।

शिक्षा जगत के विषयों औऱ प्रयासों पर आधारित कार्यक्रम है शैक्षिक समागम प्रसारित किया जाता है। युवाओं पर केंद्रित कार्यक्रम युवामन तो समसामयिक विषयों पर परिचर्चा का कार्यक्रम सुनने को मिलता है विमर्श। ऐसे अनेक रूचिपूर्ण और ज्ञानवर्धक कार्यक्रमों का गुलदस्ता है रेडियो जयघोष। ■

वर्ष 2023 - 2024 में सम्पन्न कार्यक्रमों का विवरण

1. सृजन के अंतर्गत ग्रीष्मकालीन लोकगीत कार्यशाला
11 मई 2023 से 20 मई 2023 तक
उच्च प्राथमिक विद्यालय, खेम्कंपुर, विजयीपुर, खागा, फतेहपुर

2. देशज : थारू जनजाति का समग्र
8 जून 2023
हरियाली रिजार्ट, बहराइच

3. सम्पदा
प्रत्येक माह एक रिकॉर्डिंग
ऑडियो-विजुअल रिकॉर्डिंग

4. बिरहा महोत्सव
18 जून 2023
अस्सी घाट, वाराणसी

5. रामायण कॉन्क्लेव
16 जून 2023
प्रयागराज जिला पंचायत के सभागार

6. त्रिदिवसीय लोकनाट्य पर्व
1 से 3 जुलाई 2023
झाँसी विकास प्राधिकरण प्रेक्षागृह, झाँसी

7. अमृत रथ यात्रा कार्यक्रम : 22 जनपदों के लिए 3 रथ यात्रा द्वारा
9 अगस्त 2023
उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ से शुरुआत

8. कजरी दंगल "वर्षा मंगल"
25 अगस्त 2023
भातखण्डे सं० वि० सभागार लखनऊ

9. कबीर संध्या
10 सितम्बर 2023
गोविन्द बल्लभ पंत सामाजिक विज्ञान संस्थान, झूंसी, प्रयागराज

10. लोक भाषा कवि सम्मलेन
14 सितम्बर 2023
जननायक चंद्रशेखर वि० वि०, बलिया

11. नवधा के अंतर्गत 9 देवी स्थानों में कार्यक्रम
15 से 21 अक्टूबर 2023
कुशीनगर, महाराजगंज, बलरामपुर, सहारनपुर, लखनऊ, कौशाम्बी, इटावा, ललितपुर, आगरा

12. मुखौटा, चित्रकला कार्यशालाओं की प्रदर्शनी
2 से 7 नवम्बर 2023
उत्तर प्रदेश ललित कला अकादमी, लखनऊ

13. जनजाति भागीदारी उत्सव : लोकनायक
जनजाति 15 से 21 नवम्बर 2023
उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ

14. पुतुलपर्व
2 व 3 नवम्बर 2023
गोल्डन जुबली स्कूल सभागार, प्रयागराज

15. रामोत्सव : प्रभु श्री राम के नवनिर्माण मदिर एवं प्राण प्रतिष्ठा आयोजन के उपलक्ष में सांस्कृतिक कार्यक्रम
14 जनवरी 2024 से 24 मार्च 2024 एवं 28 मार्च से 17 अप्रैल 2024
तुलसी उद्यान मंच, अयोध्या

16. रिहंद महोत्सव : एन टी पी सी के साथम
4 से 9 फरवरी 2024
सोनभद्र, उत्तर प्रदेश

17. विश्व रिकॉर्ड – शौर्य पर्व : भारतीय मार्शल आर्ट का एक साथ एक जगह पर प्रदर्शन
18 से 20 मार्च 2024
तुलसी उद्यान मंच, अयोध्या

ग्रीष्मकालीन लोकगीत कार्यशालाएं

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ द्वारा 10 दिवसीय ग्रीष्मकालीन कार्यशाला दिनांक 11 मई 2024 से 20 मई 2024 तक उच्च प्राथमिक विद्यालय, फतेहपुर में किया गया।

देशज : थारू जनजाति का समग्र

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजातीय संस्कृति संस्थान, लखनऊ एवं जिला प्रशासन, बहराइच तथा जन सांस्कृतिक एवं सामजिक विकास संस्थान, बहराइच के संयुक्त तत्वावधान में 08 जून 2023 को हरियाली रिसोर्ट में थारू जनजाति पर आधारित कार्यक्रम देशज की सफलता पूर्वक प्रस्तुति हुई जिसमे पीलीभीत, श्रावस्ती, बहराइच, बलरामपुर, तथा लखीमपुर खीरी के कलाकारों ने अपनी प्रस्तुति दी।

संपदा

आज के समय जब इन्टरनेट पर सभी जानकारियाँ प्राप्त है ऐसे में उत्तर प्रदेश में विभिन्न अवसरों पर गाये जाने वाले विशेष गीत एवं वरिष्ठ कलाकारों का मूल गायन एवं वादन को भी इन्टरनेट पर ढूँढा और देखा – सुना जा रहा है। उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ द्वारा विलुप्त होते लोकगीतों एवं वरिष्ठ कलाकारों के अपने विशेष गीतों के संकलन हेतु उनकी विडियो रिकॉर्डिंग के द्वारा उन गीतों को संरक्षित किया गया। जिसका उपयोग कालांतर में किया जा सकेगा।

बिरहा महोत्सव

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ, जिला प्रशासन, वाराणसी एवं सुबह–ए–बनारस संस्था द्वारा उत्तर प्रदेश का लोकप्रिय लोकगीत बिरहा महोत्सव, अस्सी घाट, वाराणसी पर 18 व 19 जून 2024 को किया गया।

रामायण कॉन्क्लेव, प्रयागराज

प्रभु श्री राम को समर्पित उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ, अयोध्या शोध संस्थान एवं जिला प्रशासन, प्रयागराज के संयुक्त तत्वावधान में प्रयागराज के जिला पंचायत के सभागार में दिनांक 16 जून 2023 को भव्य रामायण कॉन्क्लेव का आयोजन किया गया।

त्रिदिवसीय लोकनाट्य, झाँसी

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ एवं झाँसी विकास प्राधिकरण के संयुक्त तत्वावधान में त्रिदिवसीय लोकनाट्य समारोह का आयोजन दिनांक 1 से 3 जुलाई 2023 पर किया गया। कार्यक्रम में भगत, हरदौल एवं कथावाचन शैली में शबरी का नाट्य मंचन किया गया।

अमृत रथ यात्रा

भारत अमृत काल मना रहा है। उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ, संस्कृति विभाग, उत्तर प्रदेश एवं डेल्फिक एसोसिएशन ऑफ़ इंडिया के संयुक्त तत्वावधान में दिनांक 9 अगस्त से 15 अगस्त 2023 तक उत्तर प्रदेश के तीन रूटों पर तीन सुसज्जित बसों द्वारा 21 जनपदों में देश के वीर सपूतों की स्मृति में कार्यक्रम कराये गये। उत्तर प्रदेश के माननीय पर्यटन एवं संस्कृति मंत्री श्री जयवीर सिंह द्वारा लखनऊ से यात्रा को हरी झंडी दिखा कर विदा किया गया।

कजरी दंगल 'वर्षा मंगल'

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ तथा भातखंडे संगीत विश्वविद्यालय, लखनऊ द्वारा कजरी दंगल "वर्षा मंगल" कार्यक्रम दिनांक 25 अगस्त को भातखंडे विश्वविद्यालय के प्रेक्षाग्रह में किया गया। जिसमे पद्मश्री उर्मिला श्रीवास्तव, मिर्जापुर एवं आश्रया द्विवेदी, मिर्ज़ापुर द्वारा जवाबी कजरी की गई। साथ ही भातखंडे विश्वविद्यालय द्वारा भी सांस्कृतिक कार्यक्रम किये गये। उत्तर प्रदेश के माननीय पर्यटन एवं संस्कृति मंत्री श्री जयवीर सिंह इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि रहे।

कबीर संध्या

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ तथा गोविन्द बल्लभ पंत सामाजिक विज्ञान संस्थान, झूंसी, प्रयागराज के बीच हुए एम० ओ० यू० के अंतर्गत दिनांक 10 सितम्बर 2023 को स्वतंत्र भारत में उत्तर प्रदेश के पहले मुख्यमंत्री पंडित गोविन्द बल्लभ पंत की जयंती एवं संस्थान के स्थापना दिवस के अवसर पर कबीर संध्या का कार्यक्रम किया गया।

लोक भाषा कवि सम्मलेन

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ तथा जननायक चंद्रशेखर विश्वविद्यालय, बलिया के संयुक्त तत्वावधान में एम० ओ० यू० के अंतर्गत हिंदी दिवस के अवसर पर दिनांक 14 सितम्बर 2024 को विश्वविद्यालय सभागार में हिंदी, ब्रज, अवधी, बुन्देली, बघेली व भोजपुरी भाषा को एक साथ समाहित करती एक वृहद् कवि सम्मलेन का आयोजन किया गया।

नवधा

हमारे शास्त्रों में वर्णित भक्ति के 9 रूपों श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन को नवधा भक्ति कहते हैं। उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ एवं स्थानीय प्रशासन तथा संस्कार भारती व अन्य संस्थाओं के सहयोग से दिनांक 15 अक्टूबर से 23 अक्टूबर 2024 तक नवधा कार्यक्रम किया गया। कुशीनगर, महाराजगंज, बलरामपुर, सहारनपुर, लखनऊ, कौशाम्बी, इटावा, ललितपुर, आगरा में कार्यक्रम संपन्न हुआ।

मुखौटे एवं चित्रकला प्रदर्शनी

ग्रीष्मकालीन में संस्थान द्वारा लिप्पन कला, मुखौटे आदि की कार्यशालाएं की गई थी, जिसकी प्रदर्शनी उत्तर प्रदेश ललित कला अकादमी के संयुक्त तत्वावधान हुई। सृजन कार्यशाला के अंतर्गत की गई इन कार्यशाला की प्रदर्शनी 2 से 7 नवम्बर 2023 को उत्तर प्रदेश ललित कला अकादमी प्रदर्शनी स्थल पर किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि संस्कृति विभाग के प्रमुख सचिव श्री मुकेश कुमार मेश्राम रहे।

जनजाति भागीदारी उत्सव

लोकनायक बिरसा मुंडा के जन्म दिवस के अवसर पर दिनांक 15 से 21 नवम्बर 2023 तक जनजाति भागीदारी उत्सव, संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ में मनाया गया। उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ, जनजाति विकास विभाग, उ० प्र०, पर्यटन विभाग, उ० प्र० तथा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जन जाति, शोध एवं प्रशिक्षण लखनऊ (TRI), उ० प्र० के संयुक्त तत्वावधान में 15 राज्यों के 30 से अधिक लोक कलाओं का प्रदर्शन किया गया। इसके साथ ही उत्सव में व्यंजन और शिल्प मेले भी लगाये गये तथा परिधान प्रवाह, खेलकूद, वाद्य यंत्रों की प्रदर्शनी, पोथी घर, जनजाति चित्रकलाओं का प्रदर्शन किया गया।

पुतुलपर्व

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ, जगत तारण गोल्डन जुबली स्कूल एवं रूप कथा के संयुक्त तत्वावधान में कठपुतली नाट्य महोत्सव “पुतुलपर्व” का आयोजन जगत तरन गोल्डन जुबली स्कूल के सभागार में किया गया. दो दिवसीय या कार्यक्रम दिनांक 2 व 3 दिसम्बर को संपन्न हुआ।

रिहंद महोत्सव

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ एवं एन० टी० पी० सी०, बीजपुर के बीच हुए एम० ओ० यू० के क्रम में 6, 7 व 8 फरवरी 2024 को रिहंद महोत्सव मनाया गया जिसमे आदिवासी समाज का शिल्प मेला व व्यंजन मेला आकर्षण का केन्द्र रहा ।

रामोत्सव, अयोध्या

राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय लोक कलाओं का 92 दिनों तक तुलसी उद्यान मंच पर सांस्कृतिक कार्यक्रम संपन्न हुआ. 5000 से भी अधिक कलाकारों ने अयोध्या जाकर प्रभु श्री राम के नव निर्माण मन्दिर की प्राण-प्रतिष्ठा के उपलक्ष्य में आयोजित रामोत्सव 2024 में प्रस्तुति की। उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ क साथ पर्यटन विभाग, उत्तर प्रदेश तथा भारत के सांस्कृतिक केन्द्रों द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम में 300 से भी अधिक दल तथा 27 राज्यों के कलाकारों ने प्रतिभाग किया।

शौर्य पर्व, विश्व रिकॉर्ड

भारतीय शौर्य कलाओं को समर्पित एक ऐसा कार्यक्रम जिसमे भारत के 10 राज्यों के 17 दलों द्वारा "शौर्य पर्व" मनाया गया। इस कार्यक्रम में 250 से भी अधिक कलाकारों द्वारा एक साथ एक मंच पर अपनी शौर्य कला का प्रदर्शन किया जिसे वर्ल्ड रिकार्ड्स बुक ऑफ़ इंडिया द्वारा वर्ल्ड रिकॉर्ड में शामिल किया गया। यह कार्यक्रम 18 से 20 मार्च को अयोध्या के तुलसी उद्यान मंच पर किया गया।

लुप्त होती लोक कलाओं, परम्पराओं, शैलियों के संरक्षण का प्रयास

शौर्य गाथा 'विजयमल' का संरक्षण

उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, उत्तर प्रदेश राज्य के विभिन्न क्षेत्रों से जुडी सांस्कृतिक विरासतों को संरक्षित करने के लिए प्रयासरत है। आदिवासी-वनवासी क्षेत्र की लोकगाथा 'विजयमल' मौजूदा समय में लगभग लुप्त होने की कगार पर है। इस विधा के गायकों की संख्या भी अब नहीं के बराबर है। पूर्वांचल की शौर्य गाथा को दर्शाने वाली इस कला पर उ. प्र. लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान ने आदिवासी क्षेत्रों में शोधार्थियों को भेज कर इस विधा के गायकों, वाद्य यंत्रों की स्थिति, उनकी गायन शैली, कलाकारों की वेशभूषा का अध्ययन किया है। अब तक के शोध से हासिल जानकारी को 18 जनवरी 2023 को संगीत नाटक अकादमी के स्टूडियो में रिकॉर्ड किया गया। संस्थान प्रत्येक माह में एक दिन इस तरह की रिकॉर्डिंग के लिए प्रयासरत है ताकि लुप्त होती कलाओं को संरक्षित किया जा सके। डॉक्टर अर्जुनदास केसरी ने 1987 में मिर्जापुर में मौखिक परंपरा से प्राप्त मूल जाति की शौर्य गाथा विजयमल लोकगाथा का प्रामाणिक संग्रह करके लोक रुचि प्रकाशन, रॉबर्ट्सगंज

(सोनभद्र) से किया था जो लोरिकायन और आल्हा जैसे अन्य भोजपुरी गाथाओं की तर्ज पर सांस्कृतिक और लोकतांत्रिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस पर प्रख्यात साहित्यकार अमृतलाल नागर ने भी लिखा है। इस गाथा को प्रसिद्ध गायक मोहन बिंद ने भी संकलित किया है। ■

भोजपुरी के लोकप्रिय लोक कवि पं. हरिराम द्विवेदी का सृजन संसार

भोजपुरी के मर्म को अपनी कलम से जीवंत बनाए रखने वाले पं. हरिराम द्विवेदी ने स्वतंत्र कवि, रचनाकार के तौर पर या फिर आकाशवाणी की सरकारी सेवा में भी अपने कर्त्तव्य का केन्द्र भोजपुरी को ही बनाया। लोक-कला, संस्कृति, पर्यावरण - माटी और गंगा को लेकर चिंता को रचनाओं में उकेरा और जन जन के बीच हरि भइया के नाम से लोकप्रिय हुए। यह उनकी अप्रतिम भोजपुरी सेवा कही जा सकती है।

12 मार्च 1936 को जन्मे शेरवा ग्राम, जिला मिर्ज़ापुर के मूल निवासी पं.हरिराम द्विवेदी साहित्य अकादमी का पुरस्कार पाने के बाद, इस पुरस्कार को भोजपुरी को लेकर अपनी लड़ी जाने वाली जंग का परिणाम मानते हैं। मूलत: मीरजापुर के शेरवां के रहने वाले श्री द्विवेदी बनारस आए तो यहीं के होकर रह गए।

हरी भैया के रचे भोजपुरी गीत कई नामी गिरामी कलाकारों ने गाये हैं। हरी भैया देश विदेश में कविता मंचों के भी लोकप्रिय लोक कवि हैं। स्वयं सादगी और उच्च विचारों की प्रतिमूर्ति पंडित हरिराम द्विवेदी लोकगीत, लोककला, लोक साहित्य और लोक संस्कृति के प्रचार प्रसार में दिन रात निस्वार्थ लगे हुए हैं।

साहित्य भूषण, राहुल सांकृत्यायन, यूपी रत्न, लोकपुरुष सहित दुनियाभर के अलंकरणों से घिरे श्री द्विवेदी साहित्य अकादमी के इस पुरस्कार को संभावनाओं का द्वार मानते हैं। वे कहते भी हैं कि भोजपुरी ने बहुत सहा है, अब हम सभी को चाहिए कि उसे और पीड़ा न दें। भोजपुरी हंसेगी तो हम हंसेगें, जग विहंसेगा। ■

उल्लेखनीय गतिविधियाँ

10 जनवरी 2023, अंतरा गंगा विलास रिवर क्रूज कार्यक्रम, वाराणसी एयर पोर्ट प्रातः - धोबिया लोक नृत्य, लिल्ली घोड़ी एवं स्वागत कार्यक्रम। दोपहर- रामघाट जे.टी पर शहनाई वादन,कथक बैले।

11 जनवरी 2023, प्रातः :चुनार किला चुनार में कजरी गायन एवं स्वागत सायं ताल वाद्य कचहरी।

13 जनवरी 2023 प्रातः- संत रविदास घाट फरवाही,चैलर,करमा लोक नृत्य की प्रस्तुति

सायं- काल गांजीपुर जे.टी गंगाघाट गांजीपुर में ढेड़िया नृत्य की प्रस्तुति कार्यक्रम।

14 जनवरी 2023 प्रातं गांजीपुर जे.टी गंगाघाट गांजीपुर में ढेड़िया नृत्य की प्रस्तुति कार्यक्रम।

12 जनवरी से 14 जनवरी 2023 तक पानी पर रंगोली कार्यक्रम क्षेत्रीय ललित कला अकादमी अलीगंज।

18 जनवरी, 2023 को लुप्त होती ''लोकगाथा विजयमल'' के अभिलेखीकरण किया जा रहा है।

06 फरवरी 2023 से 08 फरवरी 2023 तक रिहन्द महोत्सव सोन शक्ति स्टेडियम, रिहन्द थर्मल पांवर बीजपुर सोनभद्र में नट, बहुरूपिया, कठपुतली, थारू जनजाति के लोक नृत्य, कबीर गायन एवं चित्रकला आदि के कार्यक्रम।

03 फरवरी 2023 राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय फाफामऊ प्रयागराज में नाटक "उठो अहिल्या" का मंचन।

09 एवं 10 फरवरी 2023 अतं० संगोष्ठी इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रयागराज।

18 फरवरी 2023 राष्ट्रीय रामायण मेला चित्रकूट में पाई डण्डा नृत्य की प्रस्तुति।

दिनांक 20 फरवरी 2023 विलुप्त होती लोक गीतो का अभिलेखीकरण श्री हरिराम द्विवेदी वाराणसी।

दिनांक 02 एवं 03 मार्च 2023, झाँसी में लोक चित्रकला, प्रदर्शनी, संगोष्ठी, बुंदेली गायन, बुंदेली राई, नृत्य, कथक नृत्य, रामलीला एवं युवा कवि सम्मेलन, राम बजन।

11 मार्च, 2023 को मैनपुरी में रंगोत्सव से सम्बन्धित सांस्कृतिक कार्यक्रम।

12 मार्च, 2023 को फ़िरोज़ाबाद के सिरसागंज में रंगोत्सव से सम्बन्धित सांस्कृतिक कार्यक्रम।

12 मार्च, 2023 को विश्वकर्मा मंदिर, मकबूलगंज लखनऊ में होली के रंग लोक गीतो के संग से सम्बन्धित सांस्कृतिक कार्यक्रम।

उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान

UTTAR PRADESH TOURISM

समाज कल्याण विभाग, उत्तर प्रदेश
DEPARTMENT OF SOCIAL WELFARE
UTTAR PRADESH

IFFCO-TOKIO GENERAL INSURANCE Muskurate Raho

SBI

आओ चलें महाकुम्भ

लोक नायक बिरसा मुंडा जयंती
जनजातीय गौरव दिवस के अवसर पर आयोजित

अन्तर्राष्ट्रीय जनजाति
भागीदारी उत्सव

15 से 20 नवम्बर 2024

आयोजक

जनजाति विकास विभाग, उत्तर प्रदेश
उत्तर प्रदेश लोक एवं जनजाति संस्कृति संस्थान, लखनऊ (संस्कृति विभाग, उत्तर प्रदेश)
उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ

Designed by: Aditya Enterprises, 8874740673